Con. 4. IX.16.49
320

अंक 9
संख्या 16

मंगलवार
23 अगस्त
सन् 1949 ई.

सत्यमेव जयते

भारतीय संविधान सभा

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

संविधान का मसौदा—*(जारी)*
[अनुच्छेद 286 से 288-क तथा 292 पर विचार] 903-961

भारतीय संविधान सभा

मंगलवार, 23 अगस्त, सन् 1949 ई.

भारतीय संविधान-सभा, कांस्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली, में प्रातः 9 बजे अध्यक्ष महोदय (माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद) के सभापतित्व में समवेत हुई।

संविधान का मसौदा — *(जारी)*

अनुच्छेद 286 से 288-क — *(जारी)*

***अध्यक्षः** अब हम अनुच्छेद 286 और उसके बाद के संशोधनों पर विचार आरम्भ करेंगे।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर** (बम्बईः जनरल): श्रीमान, आपकी अनुमति से क्या मैं संशोधन 12, 16, 17, और 19 को एक साथ पेश कर सकता हूं? वे सब एक ही विषय से सम्बन्ध रखते हैं। सब पर मिलकर वाद-विवाद हो जायेगा और फिर आप प्रत्येक संशोधन पर पृथक् मत ले सकेंगे।

***अध्यक्षः** हां, मैं सहमत हूं।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** श्रीमान, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि अनुच्छेद 286 के स्थान में यह अनुच्छेद रखा जाये:

Functions of Public Service Commissions.

286. (1) It shall be the duty of the Union and the State Public Service Commissions to conduct examinations for appointments to the services of the Union and the services of the State respectively.

(2) It shall also be the duty of the Union Public Service Commission, if requested by any two or more States so to do, to assist those States in framing and operating schemes of joint recruitment for any services for which candidates possessing special qualifications are required.

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

(3) The Union Public Service Commission or the State Public Service Commission, as the case may be, shall be consulted—

(a) on all matters relating to methods of recruitment to civil services and for civil posts;

(b) on the principles to be followed in making appointments to civil services and posts and in making promotions and transfers from one service to another and on the suitability of candidates for such appointment, promotions or transfers;

(c) on all disciplinary matters affecting a person serving under the Government of India or the Government of a State in a civil capacity, including memorials or petitions relating to such matters;

(d) on any claim by or in respect of a person who is serving or has served under the Government of India or the Government of a State or under the Crown, in a civil capacity, that any costs incurred by him in defending legal proceedings instituted against him in respect of acts done or purporting to be done in the execution of his duty should be paid out of the Consolidated Fund of India or, as the case may be, of the State;

(e) on any claim for the award of a pension in respect of injuries sustained by a person while serving under the Government of India or the Government of a State or under the Crown in a civil capacity, and any question as to the amount of any such award, and it shall be the duty of a Public Service Commission to advise on any matter so referred to them and on any other matter which the President or, as the case may be, the Governor or Ruler of the State may refer to them:

Provided that the President as respects the All India Services and also as respects other services and posts

in connection with the affairs of the Union, and the Governor or Ruler, as the case may be, as respects other services and posts in connection with the affairs of a State, may make regulations specifying the matters in which either generally, or in any particular class of case or in any particular circumstances, it shall not be necessary for a Public Service Commission to be consulted.

(4) Nothing in clause (3) of this article shall require a Public Service Commission to be consulted as respects the manner in which appointments and posts are to be reserved in favour of any backward class citizens in the Union or a State.

(5) All regulations made under the proviso to clause (3) of this article by the President or the Governor or ruler of a State shall be laid for not less than fourteen days before each House of Parliament or the Houses or each House of the Legislature of the State, as the case may be, as soon as possible after they are made, and shall be subject to such modifications, whether by way of repeal or amendment, as both Houses of Parliament or the House or both Houses of the Legislature of the State may make during the session in which they are so laid."

लोक-सेवा आयोगों के कृत्य

286. (1) संघ तथा राज्य के लोक-सेवा आयोगों का कर्तव्य होगा कि क्रमशः संघ की सेवाओं और राज्य की सेवाओं में नियुक्तियों के लिये परीक्षाओं का संचालन करें।

(2) यदि संघ लोक-सेवा आयोग से कोई दो या अधिक राज्य ऐसा करने की प्रार्थना करें तो उसका यह भी कर्तव्य होगा कि ऐसी किन्हीं सेवाओं के लिये, जिनके लिये विशेष अर्हता वाले अभ्यर्थी अपेक्षित हैं, मिली जुली भर्ती की योजनाओं के बनाने तथा प्रवर्तन में लाने के लिये उन राज्यों की सहायता करें।

(3) यथास्थिति संघ लोक-सेवा आयोग या राज्य लोक-सेवा आयोग से–

(क) असैनिक सेवाओं में और असैनिक पदों के लिये भर्ती की रीतियों से सम्बद्ध समस्त विषयों पर,

(ख) असैनिक सेवाओं और पदों पर नियुक्ति करने के, तथा एक सेवा से दूसरी सेवा में पदोन्नति और बदली करने के, तथा अभ्यर्थियों की ऐसी नियुक्ति, पदोन्नति अथवा बदली की उपयुक्तता के बारे में अनुसरण किये जाने वाले सिद्धान्तों पर,

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

(ग) ऐसे व्यक्ति पर, जो भारत सरकार अथवा किसी राज्य की सरकार की असैनिक हैसियत से सेवा कर रहा है, प्रभाव डालने वाले अनुशासन विषयों से जो अभ्यावेदन या याचिकाएं सम्बद्ध हैं उनके सहित समस्त ऐसे अनुशासन विषयों पर,

(घ) ऐसे व्यक्ति द्वारा कृत, जो भारत सरकार या किसी राज्य की सरकार के अधीन या भारत सम्राट् के अधीन या देशी राज्य की सरकार के अधीन असैनिक हैंसियत से सेवा कर रहा है या कर चुका है, अथवा वैसे व्यक्ति के सम्बन्ध में कृत, जो कोई दावा है कि अपने कर्तव्य पालन में किये गये, या कर्तुमभिप्रेत, कार्यों के सम्बन्ध में उसके विरुद्ध चलाई गई किन्हीं विधि कार्यवाहियों में जो खर्चा उसे अपनी प्रतिरक्षा में करना पड़ा है वह यथास्थिति भारत की संचित निधि में से या राज्य की संचित निधि में से दिया जाना चाहिये, उस दावे पर,

(ङ) भारत सरकार या किसी राज्य किसी सरकार या सम्राट के अधीन अथवा किसी देशी राज्य की सरकार के अधीन असैनिक हैसियत से सेवा करते समय किसी व्यक्ति को हुई क्षति के बारे में निवृत्ति वेतन दिये जाने के लिये किसी दावे पर तथा ऐसी दी जाने वाली राशि क्या हो, इस प्रश्न पर, परामर्श किया जायेगा, तथा इस प्रकार उनसे पृच्छा किये हुए किसी विषय पर तथा किसी अन्य विषय पर, जिस पर यथास्थिति राष्ट्रपति अथवा उस राज्य का राज्यपाल या राजप्रमुख उनसे पृष्छा करे, परामर्श देने का लोक-सेवा आयोग का कर्तव्य होगा:

परन्तु अखिल भारतीय सेवाओं के बारे में तथा संघ कार्यों से संसक्त अन्य सेवाओं और पदों के बारे में भी राष्ट्रपति तथा राज्य के कार्यों से संसक्त अन्य सेवाओं और पदों के बारे में यथास्थिति राज्यपाल या शासक, उन विषयों का उल्लेख करने वाले विनियम बना सकेगा, जिनमें साधारण तथा अथवा किसी विशेष वर्ग के मामले में, अथवा किन्हीं विशेष परिस्थितियों में, लोक-सेवा आयोग से परामर्श किया जाना आवश्यक न होगा।

(4) खण्ड (3) की किसी बात से यह अपेक्षा न होगी कि लोक-सेवा आयोग से उस रीति के बारे में परामर्श किया जाये जिससे कि संघ अथवा राज्य के किसी पिछड़े वर्ग के नागरिकों की नियुक्ति की जाती है या उनके लिये पद रक्षित किये जाते हैं।

(5) खण्ड (3) के परन्तुक के अधीन राष्ट्रपति अथवा किसी राज्य के राज्यपाल या शासक द्वारा बनाये गए सब विनियम उनके बनाये जाने के पश्चात् यथासम्भव शीघ्र यथास्थिति संसद के प्रत्येक सदन,

अथवा राज्य के विधान मण्डल के सदन या प्रत्येक समक्ष चौदह दिन से अन्यून समय के लिये रखे जायेंगे, तथा निरसन या संशोधन द्वारा किये गये ऐसे रूपभेदों के अधीन होंगे जैसे कि संसद के दोनों सदन अथवा उस राज्य के विधानमण्डल का सदन या दोनों सदन उस सत्र में करें जिसमें कि वे इस प्रकार रखे गये हों।

"कि अनुच्छेद 287 के स्थान में यह अनुच्छेद रखा जाये:

287. An Act made by Parliament or, as the case may be, the Legislature of a State may provide or the exercise of additional functions by the Union Public Service Commission or the State Public Service Commission as respects the services of the Union or the State and also as respects the services of any local authority or other body corporate constituted by law or public institution."

Power to extend functions of Public Service Commissions.

287. यथास्थिति संसद द्वारा निर्मित अथवा राज्य के विधान-मण्डल द्वारा निर्मित कोई अधिनियम संघ लोक-सेवा आयोग या राज्य लोक-सेवा आयोग द्वारा संघ की या राज्य की सेवाओं के बारे में, तथा किसी स्थानीय प्राधिकारी अथवा विधि द्वारा गठित अन्य निगम निकाय अथवा किसी सार्वजनिक संस्था की सेवाओं के बारे में भी अतिरिक्त कृत्यों के प्रयोग के लिये उपबन्ध कर सकेगा।

लोक सेवा आयोगों के कृत्यों के विस्तार की शक्ति।

"कि अनुच्छेद 288 के स्थान में यह अनुच्छेद रखा जाये:

288. The expenses of the Union or a State Public Service Commission, including any salaries, allowances and pensions, payable to or in respect of the members or staff of the Commission, shall be charged on the Consolidated Fund of India or, as the case may be, the State."

Expenses of Public Service Commissions.

288. संघ के या राज्य के, लोक-सेवा आयोग के व्यय, जिनके अन्तर्गत आयोग के सदस्यों या कर्मचारीवृन्द को, या के विषय में, दिये जाने वाले कोई वेतन, भत्ते और निवृत्ति वेतन भी यथास्थिति भारत के संचित निधि या राज्य की संचित निधि पर भारित होंगे।

लोक-सेवा आयोगों के व्यय।

"कि संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 3075 के स्थान पर यह संशोधन रखा जाये:

कि अनुच्छेद 288 के बाद यह नया अनुच्छेद प्रविष्ट किया जाये:

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

Reports of the Public Service Commission.

288-A. (1) It shall be the duty of the Union Commission to present annually to the President a report as to the work done by the Commission and on the receipt of such report the President shall cause a copy thereof together with a memorandum explaining, as respects the cases, if any, where the advice of the Commission was not accepted, the reasons for such non-acceptance to be laid before each House of Parliament.

(2) It shall be the duty of a State Commission to present annually to the Governor or Ruler of the State a report as to the work done by the Commission, and it shall be the duty of a Joint Commission to present annually to the Governor or Ruler or each of the States the needs of which are served by the Joint Commission a report as to the work done by the Commission in relation to that state, and in either case the Governor or Ruler, as the case may be, shall, on receipt of such report, cause a copy thereof together with a memorandum explaining as respects the cases, if any, where the advice of the Commission was not accepted, the reasons for such non-acceptance to be laid before the Legislature of the State."

लोक-सेवा आयोगों के प्रतिवेदन

288-क. (1) संघ आयोग का कर्तव्य होगा कि राष्ट्रपति को आयोग द्वारा किये गये काम के बारे में प्रतिवर्ष प्रतिवेदन दे, तथा ऐसे प्रतिवेदन के मिलने पर राष्ट्रपति उन मामलों मे बारे में, यदि कोई हों, जिनमें कि आयोग का परामर्श स्वीकार नहीं किया गया, ऐसी अस्वीकृति के लिये कारणों को स्पष्ट करने वाले ज्ञापन से सहित उस प्रतिवेदन की प्रतिलिपि संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष रखवायेगा।

(2) राज्य आयोग का कर्तव्य होगा कि राज्य के राज्यपाल या राजप्रमुख को आयोग द्वारा किये गये काम के बारे में प्रतिवर्ष प्रतिवेदन दे तथा संयुक्त आयोग का कर्तव्य होगा कि ऐसे राज्यों में से प्रत्येक के, जिनकी आवश्यकताओं की पूर्ति संयुक्त आयोग द्वारा की जाती है, राज्यपाल या राजप्रमुख को उस राज्य के संबंध में आयोग द्वारा किये गये काम के बारे में प्रति वर्ष प्रति-वेदन दे तथा इन में से प्रत्येक अवस्था में ऐसे प्रतिवेदन के मिलने पर यथास्थिति राज्यपाल या राजप्रमुख उन मामलों के बारे में, यदि कोई हों, जिनमें कि आयोग का परामर्श स्वीकार नहीं किया गया है, ऐसी अस्वीकृति के लिये कारणों को स्पष्ट करने वाले ज्ञापन के सहित उस प्रतिवेदन की प्रतिलिपि राज्य के विधान-मण्डल के समक्ष रखवायेगा।

ये अनुच्छेद स्वयं व्याख्यात्मक है और मैं नहीं समझता हूं कि इस समय मेरे लिये किसी भी बात को स्पष्ट करने के लिये कोई व्याख्या करना आवश्यक है क्योंकि सभी बातें बहुत स्पष्ट हैं। अत: अन्त में मैं कुछ कहूंगा जबकि वाद-विवाद के पश्चात् शायद मेरे लिये उठाये गये प्रश्नों में से कुछ प्रश्नों की व्याख्या करना आवश्यक हो जाये।

श्रीमान, मैं इन प्रस्तावों को पेश करता हूं।

***श्री जसपतराय कपूर** (संयुक्तप्रान्त: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि उपरोक्त संशोधन संख्या 12 में प्रस्थापित अनुच्छेद 286 के खण्ड (2) को अपमार्जित किया जाये और अनुवर्ती खण्डों को तदनुसार फिर से क्रमांकित किया जाये।

अनुच्छेद 286 का खण्ड (2) इस प्रकार है:

(2) यदि संघ लोक-सेवा आयोग से कोई दो या अधिक राज्य ऐसा करने की प्रार्थना करें तो उसका यह भी कर्तव्य होगा कि ऐसी किन्हीं सेवाओं के लिये, जिनके लिये विशेष अर्हता वाले अभ्यर्थी अपेक्षित हैं, मिली-जुली भर्ती की योजनाओं के बनाने तथा प्रवर्तन में लाने के लिये उन राज्यों की सहायता करें।

मैं इस कारण इसे अपमार्जित करना चाहता हूं कि जिस बात का यहां उपबन्ध किया गया है वह अनुच्छेद 284 के खण्ड (3) में आ जाती है जिसे हम कल पारित कर चुके हैं। अनुच्छेद 284 का खण्ड (3) इस प्रकार है:

"यदि किसी राज्य का राज्यपाल या शासक, संघ के लोक-सेवा आयोग से ऐसा करने की प्रार्थना करे तो, राष्ट्रपति के अनुमोदन से, वह उस राज्य की सब या किन्हीं आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये कार्य करना स्वीकार कर सकेगा।"

श्रीमान, यह स्पष्ट है कि अनुच्छेद 286 के खण्ड (2) में जिस बात का उपबन्ध किया गया है वह अनुच्छेद 284 के खण्ड (3) में उपबन्धित है। प्रकट रूप में अनुच्छेद 284 के खण्ड (3) का अर्थ अनुच्छेद 286 के खण्ड (2) से कहीं अधिक व्यापक है। अत: यह स्पष्ट है कि यह खण्ड (2) अनावश्यक तथा व्यर्थ है। अनुच्छेद 286 के खण्ड (2) का अपमार्जन इस अनुच्छेद के असाधारण दीर्घाकार पर किसी प्रकार का भी प्रभाव नहीं डालेगा क्योंकि उसके अपमार्जन के बाद भी अनुच्छेद काफी बड़ा बना रहेगा और मसौदा-समिति को ऐसी कोई शंका नहीं करनी चाहिये कि उसकी यह जो टेब पड़ गई है कि अनुच्छेदों के लम्बे-लम्बे मसौदे बनाये और संविधान में प्रत्येक छोटे से छोटे विवरण को रखे—इस टेब पर कोई विशेष प्रभाव पड़ेगा। हां, हम यह जानते हैं कि मसौदा, समिति के पास शब्दों और पदों का असीम भण्डार है, पर प्रत्येक छोटे विवरण के लिये उपबन्ध करते हुये तथा उसको जटिल बनाते हुए इस संविधान में उस समस्त भण्डार को खाली कर देना आवश्यक नहीं है। अत: मैं समझता हूं कि एक अनावश्यक और व्यर्थ बात को हटाने के हेतु यह आवश्यक है कि

[श्री जसपतराय कपूर]

खण्ड (2) अपमार्जित किया जाये। इस सम्बन्ध में मुझे यही निवेदन करना है। अनुच्छेद 288 के सम्बन्ध के संशोधन संख्या 18 को मैं पेश नहीं करना चाहता हूं।

(संशोधन संख्या 14, 15, 74, और 75 पेश नहीं किये गये।)

***सरदार हुकम सिंह:** (पूर्वी पंजाब: सिख): अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (पंचम सप्ताह) के संशोधन संख्या 12 में प्रस्थापित अनुच्छेद 286 के खण्ड (3) के परन्तुक को अपमार्जित किया जाये।"

मेरी तुच्छ सम्मति के अनुसार इस परन्तुक में के विचार अन्य अनुच्छेदों के विचारों के अनुसार नहीं हैं। हम एक बहुत बड़ा क्षेत्र विनिहित कर रहे हैं जिसमें लोक-सेवा आयोग से परामर्श करना होगा और उसमें हमने स्थानान्तरण, पदवृद्धि तथा अन्य बातें भी रख ली हैं। यह एक बहुत अच्छा आदर्श है। जबकि हम यह उपबन्ध कर रहे हैं कि इन विषयों तक के लिये लोक-सेवा आयोग से परामर्श करना चाहिये तो हमें इस कमी को न रहने देना चाहिये जिसके कारण बहुमत प्राप्त दल को राष्ट्रपति या राज्यपाल से विनियम प्राप्त करना सरल हो जाये कि लोक-सेवा आयोग से परामर्श करना उसके लिये आवश्यक नहीं है। मेरी राय में यद्यपि यहां एक उपबन्ध कर दिया गया है कि राज्यपाल तथा राष्ट्रपति को विनियम बनाने की शक्ति होगी, पर वे अपने मंत्रियों की मन्त्रणा का अनुसरण करेंगे और मंत्री बहुमत प्राप्त दल का प्रतिनिधित्व करेंगे। इन विनियमों में समय-समय पर परिवर्तन होता रहेगा और इस बात की गुंजाइश है कि पक्षपात और कुलपोषण को विस्तृत करने के उद्देश्य से वे ऐसे विनियम बना दें जो उनकी सुविधा के अनुकूल हों। मेरी आपत्ति यह है कि चूंकि यह केवल परामर्श देने वाला निकाय है, यह आवश्यक नहीं है कि लोक-सेवा आयोग मन्त्रणा को माना जाये। अनुच्छेद 288-क में एक यह उपबन्ध है कि लोक-सेवा आयोग प्रतिवर्ष राष्ट्रपति की सेवा में एक प्रतिवेदन प्रस्तुत करेगा और राष्ट्रपति उसकी एक प्रति ज्ञाप सहित उन कुछ उदाहरणों को स्पष्ट करते हुए जिनमें आयोग की मन्त्रणा स्वीकार नहीं की गई है और इस प्रकार की अस्वीकृतियों का कारण बताते हुए संसद के समक्ष प्रस्तुत करायेगा। कारण बताने पड़ेंगे। अत: इसके कारण एक अच्छे अवरोध की व्यवस्था हो गई और यदि यह उपबन्ध वहां न रहे तो इस अनुच्छेद के कार्यान्वित हो जाने पर कल्याणकारी प्रभाव पड़ेगा। मेरी राय से इस परन्तुक का अपमार्जन हो जाना चाहिये।

***श्री लक्ष्मीनारायण साहू** (उड़ीसा: जनरल): श्रीमान, मैं थोड़ा सा परिवर्तन करना चाहता हूं क्योंकि इसमें शब्दावली ठीक प्रकार से नहीं रखी गई है। 'having a scale with a maximum of 250 or more' शब्दों के स्थान में मैं 'carrying a maximum of Rs. 250' शब्द रखना चाहता हूं।

***अध्यक्ष:** जी हां, रखिये।

श्री लक्ष्मीनारायण साहू: सभापति जी, मेरा संशोधन इस तरह से है:

"That in Amendment No. 12 of List I (Fifth Week) of Amendments to amendments, for clause (3) of the Proposed article 286, the following be substituted:—

"(3) The Union Public Service Commission as respects the All-India Services and also as respects other services and posts in connection with the affairs of the Union, and the State Public Service Commission as respects the State Services and also as respects other services and posts in connection with the affairs or the State, shall be responsible for all appointments, having a scale with a maximum of Rs. 250 or more."

यह संशोधन देने का मेरा मतलब यह है कि जब हम पूरे तौर से और पूरे जोर से गणतन्त्र चलाना चाहते हैं तो हम पब्लिक सर्विस कमीशन बनाते हैं। नहीं तो पब्लिक सर्विस कमीशन बनाने की जरूरत भी नहीं है। सब काम हम कर सकते हैं। पब्लिक सर्विस कमीशन की क्या जरूरत है। हम पब्लिक सर्विस कमीशन इसलिये चाहते हैं कि जो डिमोक्रेटिक फार्म ऑफ गवर्नमेण्ट आती है उसमें पोलीटिकल पार्टीज़ रहती हैं और वह नौकरी में बहुत गड़बड़ करती हैं, वह इस तरह की गड़बड़ न कर सकें। इसीलिये ऐसी एक संस्था बनानी चाहिये जिसमें कि कोई यह न कह सके कि यह पोलीटिकल पार्टी के प्रभाव में काम करती है। इसीलिये हम देखते हैं कि पब्लिक सर्विस कमीशन की जरूरत है और जब पब्लिक सर्विस कमीशन की जरूरत है तो एक कांस्टीट्यूशन इस तरह का बनाना चाहिये कि जितनी सर्विसेज़ हैं उन पर उसका पूरा काबू रहे। तब तो ठीक हो सकता है। कोई कोई कहते हैं कि जब हम गणतन्त्र करते हैं तो हमें गवर्नमेण्ट पर विश्वास करना चाहिये और यह कहा जाता है कि अगर हम गणतन्त्र चलाते हैं और गवर्नमेण्ट पर विश्वास नहीं करते हैं तो गणतन्त्र कैसे चल सकेगा। लेकिन मैं सुनता हूं कि इंग्लैण्ड में और डोमीनियन्स में जहां पर कि गणतन्त्र चलता है वहां पर भी पब्लिक सर्विस कमीशन का सर्विसेज़ पर बहुत ज़्यादा काबू है। इसीलिये मैं समझता हूं कि यह संशोधन जरूर ग्रहण करना चाहिये।

***डॉ. पी.एस. देशमुख** (मध्यप्रान्त और बरार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, संशोधनों पर संशोधनों की सूची 3, पंचम सप्ताह, के संशोधन संख्या 82 को पेश करने के लिये मैं खड़ा होता हूं। "कि प्रस्थापित अनुच्छेद 286 के खण्ड (3) में 'shall' शब्द के स्थान में 'may' शब्द रखा जाये।" कल इन अनुच्छेदों पर जब हम वाद-विवाद आरम्भ करने वाले थे, मैंने इस सभा में इस बात पर जोर दिया था कि आयोगों के सम्बन्ध के उपबन्धों को इतना कठोर नहीं बनाना चाहिये जितने वे बनाये जा रहे हैं और मेरा यह संशोधन इसी प्रकार पर है। मैं चाहता हूं। कि इस प्रस्थापित अनुच्छेद 286 में, जिसमें कि बहुत सी बातें आभारणीय तथा

[डॉ. पी.एस. देशमुख]

अनिवार्य बनाई जा रही हैं, विधान-मण्डलों तथा संसद की मर्जी पर भी यह छोड़ना चाहिये कि क्या लोक-सेवा आयोग से अनिवार्यतः परामर्श करना चाहिये या इन विषयों को पूर्णतया उस पर छोड़ देना चाहिये या नहीं।

खण्ड (3) में उल्लिखित विभिन्न विषय बहुत महत्वपूर्ण है और यदि इन सभी को अनिवार्य बना दिया जाता है तो विभिन्न प्रान्तों की सरकारों और संसद तक को भी लोक-सेवाओं में भर्ती की शर्तों और निबन्धनों में परिवर्तन करने अथवा नवीन परिस्थितियों के अनुसार आवश्यक रूप में उन्हें बदलने की बहुत कम गुजाइश रह जायेगी। प्रथम खण्ड में कहा गया है:

> "संघ लोक-सेवा आयोग या राज्य-सेवा आयोग से (क) असैनिक सेवाओं में और असैनिक पदों के लिये भर्ती की रीतियों से सम्बद्ध समस्त विषयों पर परामर्श किया जायेगा।"

इसका यह अभिप्राय होगा कि यदि लोक-सेवा आयोग यह कहता है कि योग्यता का अन्तिम प्रमाण केवल विश्वविद्यालय की परीक्षा या अन्य परीक्षा को पारित कर लेना ही है तो चाहे राज्य के विधान-मण्डल या संसद इसके विपरीत कुछ भी समझें पर यह बात लागू होगी ही। मेरा सदैव यह विचार रहा है कि ब्रिटिश सरकार ने इन विश्वविद्यालय की योग्यताओं का व्यर्थ ढोल पीट रखा है क्योंकि वे भारत राष्ट्र को बाबूपन के निम्न स्तर पर ले जाना चाहते थे। हमारी वर्तमान सरकार भी अभी तक कोई अन्य प्रमाण नहीं सोच पाई है। यह बड़ी दुर्भाग्यपूर्ण बात है। लोगों की योग्यता का अनुमान केवल परीक्षायें पारित करने या अधिकतम अंक प्राप्त करने से नहीं लगाया जा सकता है। पर वे सम्प्रदाय, जो अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त किये हुए हैं और चूंकि औरों की अपेक्षा वे अधिक चापलूस हैं, यह समझते हैं कि वह उनकी ही बपौती है और जब कोई व्यक्ति उन करोड़ों का पक्ष लेकर बोलने लगता है जिन्हें शिक्षा प्राप्त करने का कोई अवसर नहीं मिला, तो वे अन्य सम्प्रदायों की ओर से इसे अपने एकाधिकार के प्रति धमकी के रूप में समझते हैं और उन लोगों के समर्थकों पर सम्प्रदाय वादी होने का दोषारोपण करते हैं। इसमें साम्प्रदायिकता की कोई बात नहीं है। न मैं और न कोई अन्य व्यक्ति जो उनका पक्ष लेता है वह किसी विशेष सम्प्रदाय का प्रभुत्व स्थापन करना चाहता है, बल्कि जो लोग इस बात का विरोध करते हैं उन्हें केवल कुछ खास सम्प्रदायों में रूचि है। हम पर साम्प्रदायिकता का दोषारोपण कर वे साम्प्रदायिकता को बनाये रखना चाहते हैं क्योंकि उन्हें शिक्षा का श्रेय प्राप्त है और भय है कि यह कहीं छिन न जाये। वे ये यह समझते हैं और इस बात पर जोर देते हैं कि योग्यता की परीक्षा केवल परीक्षाओं द्वारा ही हो सकती है। पर जहां तक देश की जनता का प्रश्न है हमारी असंख्य जनसंख्या जिसे प्राथमिक शिक्षा प्राप्त करने तक का अवसर नहीं मिला है, जब तक कि वर्तमान पद्धति प्रचलित है जहां तक लोक-सेवाओं का सम्बन्ध है उनमें उसके लिये कोई स्थान नहीं है।

***श्री महावीर त्यागी** (संयुक्तप्रान्त: जनरल): अशिक्षितों के लिये कोई स्थान नहीं है।

***डॉ. पी.एस. देशमुखः** हमें इस तथ्य को मानना ही पड़ेगा कि भारत में विभिन्न सम्प्रदायों की उन्नति में बहुत अन्तर रहा है। अनुसूचित जातियों के लिये हमने रक्षण क्यों रखा है? इसलिये कि हमें यह पूर्ण विश्वास है कि उनकी उन्नति में दुर्गम रुकावटें रही हैं। जन जाति के लोगों के लिये हमने रक्षण क्यों रखा है? यह भी उसी कारण के आधार पर है। हमारे देश में अनुसूचित और जन जातियों के लोगों के समान और भी अन्य लाखों लोग हैं जिनमें कमियां और जिनके लिये रुकावटें किसी प्रकार से भी अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लोगों से भिन्न प्रकार की नहीं हैं, और मैं चाहता हूं कि इन लोगों के आने के लिये स्थान छोड़ा जाये और इस वर्तमान पद्धति के कारण जो असमानतायें हुई हैं उनका निराकरण हो जाये।

यह मैं इसलिये कहता हूं कि इस देश के इतिहास में अब के पश्चात् जनता के सच्चे प्रतिनिधि देश पर शासन करेंगे और इस कारण उनके हाथ बंधे नहीं रहने चाहियें। यह हो सकता है कि इस सभा द्वारा नियत अपने बहुत ही सीमित मताधिकार के आधार पर निर्वाचित राज्य के विधान-मण्डल तथा निर्वाचित संसद को सेवाओं में भर्ती की शर्तों में परिवर्तन करने की शक्ति दे दी जाये, क्योंकि यहां भी ऐसे लोगों की संख्या अधिक नहीं है जो उन सब बातों का प्रतिनिधित्व करते हों जिन्हें भारत की जनता सोचती है और जिनका वह अनुभव करती है। अंग्रेज़ों के आदर्श का अनुकरण करने और उनकी पदावलियों की नकल करने से कुछ लाभ नहीं। भारत में ये बातें हमारे लिए अनुकूल नहीं होंगी। भारत इंग्लैण्ड नहीं है और इंग्लैण्ड की नकल करने से कोई लाभ नहीं। वहां सब लोगों ने एक ही प्रकार से साथ-साथ उन्नति की है, पर भारत में ऐसा नहीं हुआ है। आज भी भारत के 85 प्रतिशत व्यक्तियों के लिये शिक्षा की कोई सुविधा नहीं है क्योंकि वे गांवों में रहते हैं और हम इन लोगों से यह कह रहे हैं कि वे उन लोगों से मुकाबला करें जिनको ये सुविधायें प्राप्त हैं। यह बिल्कुल असम्भव है। यह उन दो आदमियों में एक मील की दौड़ कराने के समान है जिनमें से एक आधा मील आगे पहुंच चुका है और दूसरा अभी दौड़ने की तैयारी कर रहा है। यह बिल्कुल असमान, अनुचित तथा अन्यायपूर्ण है, और यह इस अन्याय और अनौचित्य पर अड़े रहेंगे तो मुझे विश्वास है कि यह हमारे लिये लाभदायक नहीं होगा।

ये सब महत्वपूर्ण विषय हैं जिनका अनुच्छेद 286 में उपबन्ध किया गया है। प्रथम–भर्ती की रीति से; द्वितीय–नियुक्ति करने के तथा पदोन्नति और स्थानान्तरण तक के सम्बन्ध में जिन सिद्धान्तों का पालन किया जायेगा उनसे; तृतीय–किसी व्यक्ति पर प्रभाव डालने वाले समस्त अनुशासनीय विषयों से जिनमें ज्ञापन और याचिकायें भी शामिल है; चतुर्थ–किसी व्यक्ति द्वारा अथवा उसके सम्बन्ध में किसी मांग से जो सरकार या राज्य की सरकार या सम्राट् के अधीन किसी असैनिक रूप में सेवा कर रहा है या कर चुका है और अन्तिम–निवृत्ति वेतन इत्यादि की किसी मांग से उनका सम्बन्ध है। यह स्पष्ट है कि भर्ती तथा सम्बन्धित विषय की समस्त बातों का निश्चयन लोक सेवा आयोग के द्वारा किया जायेगा यहां तक कि यदि संसद या राज्य के विधान-मण्डल किसी उपरोक्त शर्त में किसी प्रकार का परिवर्तन करना चाहते हैं तो वह भी नहीं माना जा सकता है। मैं यह नहीं कहता हूं कि इसे पूर्णतया अस्पष्ट रूप में छोड़ देना चाहिये, मैं तो केवल यह कहता हूं कि विधान-मण्डल या संसद ऐसी स्थिति में रहने चाहियें कि जब और जहां वे चाहें इन विभिन्न बातों में परिवर्तन कर सकें।

[डॉ. पी.एस. देशमुख]

श्रीमान, यह प्रत्यक्ष है कि राष्ट्रपति को हम प्रत्येक सम्भाव्य व्यक्ति से सुसज्जित करना चाहते हैं। यहां इस परन्तुक में भी हम यह देखते हैं कि राष्ट्रपति को हिंदी विषयों को रोक रखने की शक्ति दी गई है। जिनके बारे में वह अपने स्वविवेक द्वारा यह सोचता है कि वे आयोग के पास न भेजे जायें। मैं यह चाहता हूं कि हम इस शक्ति को संसद तथा राज्य के विधान-मण्डलों को दें न कि किसी व्यक्ति को।

श्रीमान, एक संशोधन और भी है जिसको आपकी अनुज्ञा से मैं पेश करना चाहता हूं। वास्तव में वह संशोधन न्यूनाधिक रूप में इसी प्रकार है तथा इसी उद्देश्य की पुष्टि के लिये है जिसको मैंने अभी इस संशोधन में पेश किया है। परन्तु अनुच्छेद 286 में एक खास तथा विशिष्ट उपबन्ध रखना उसमें प्रस्थापित किया गया है।

***अध्यक्ष:** संख्या 861।

***डॉ. पी.एस. देशमुख:** जी हां, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (पंचम सप्ताह) के संशोधन संख्या 12 में प्रस्थापित अनुच्छेद 286 के खण्ड (4) के अन्त में पूर्ण-विराम के स्थान में अर्द्ध-विराम कर दिया जाये और उसके पश्चात् यह जोड़ दिया जाये:

'Or for the purpose of bringing about a just and fair representation of all classes in Public Services of the Union or a State.' "

(अथवा संघ की या किसी राज्य की लोक-सेवाओं में सब वर्गों का ठीक तथा उचित प्रतिनिधित्व कराने के प्रयोजन से।)

इसके विकल्प में एक और भी संशोधन है अर्थात् संशोधन संख्या 88, और उसको भी मैं पेश करना चाहूंगा:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (पंचम सप्ताह) के संशोधन संख्या 12 में प्रस्थापित अनुच्छेद 286 के खण्ड (4) के पश्चात् यह खण्ड (5) प्रविष्ट किया जाये और वर्तमान खण्ड (5) की क्रमसंख्या खण्ड (6) के रूप में कर दी जाये:

'[(5) Nothing in clause (3) of this article shall require a Public Service Commission to be consulted as respects the manner in which appointments are made and posts reserved for purposes of giving representation to various classes according to their numbers in the Union or a State.' "

[(5) इस अनुच्छेद के खण्ड (3) में दी हुई कोई बात लोक-सेवा आयोग से उस रीति के सम्बन्ध में परामर्श करने के लिये अपेक्षित नहीं होगी

जिसके अनुसार संघ अथवा किसी राज्य में विभिन्न वर्गों को संख्या के अनुसार प्रतिनिधित्व देने के प्रयोजन से नियुक्तियां की जाती हैं तथा पद रक्षित रखे जाते हैं।]

जैसा कि मैं कह चुका हूं संशोधन संख्या 86 और 88 एक दूसरे के विकल्प हैं और यदि एक स्वीकार कर लिया जाता है तो मैं दूसरे पर जोर नहीं दूंगा, यद्यपि मैं अपनी ओर से इस बात पर जोर दूंगा कि संशोधन संख्या 86 अधिक मान्य है चूंकि वह अपेक्षाकृत अधिक स्पष्ट है।

इस संशोधन का उद्देश्य यह है कि संघ तथा राज्यों की लोक-सेवाओं में सब वर्गों को ठीक तथा उचित प्रतिनिधित्व प्राप्त हो और इस विषय को केवल प्रतियोगिता पर न छोड़ा जाये और लोक-सेवा आयोग की इच्छा पर निर्भर न किया जाये। यदि हम लोक-सेवाओं में भर्ती की प्रणालियों की जांच करें तो हमें विदित होगा कि वास्तव में कुछ प्रान्तों के लोगों ने, जो अपने अधिकारों के प्रति अधिक सजग थे, यह आन्दोलन किया कि अपने प्रान्तों के प्रशासन में हमें कोई भाग नहीं मिल रहा है, और उनके आन्दोलन के फलस्वरूप उन प्रान्तों की सरकारों को उनकी बात माननी पड़ी। यह विशेषकर उस विकासोन्मुख तथा उन्नत मद्रास प्रान्त में हुआ जहां विभिन्न सम्प्रदाय भिन्न-भिन्न यूथों में संगठित हो गये और प्रत्येक यूथ को उसकी जनसंख्या के आधार पर सरकारी सेवाओं में प्रतिनिधित्व किया गया। इसका लाभदायक रूप में प्रयोग हुआ और परिणाम यह निकला कि समस्त भारत में मद्रास अग्रगण्य प्रान्तों में आ गया। यही कारण है, हम देखते हैं कि दिल्ली मद्रासियों से भरी पड़ी है क्योंकि उनका शिक्षा का स्तर इस तथ्य के कारण उच्च हो गया कि सब सम्प्रदायों ने मिलकर समान रूप में उन्नति की न कि विषमानुपात में जैसा कि अन्यत्र हुआ है। वहां आपको उस विषमानुपात में उन्नति दिखाई नहीं देगी जैसी कि अन्य प्रान्तों में है जहां कि दलित सम्प्रदाय सदैव अपने भाग्य पर संतोष करते रहे हैं, जहां कि सरकार में और अधिक स्थान प्राप्त करने के लिये उन्होंने आन्दोलन नहीं किये और जहां कि उन्नत सम्प्रदायों ने उनकी मांगों पर विचार करने और उन्हें किसी रूप में सहायता करने की उदारता नहीं दिखाई। यह विशेषकर मध्य प्रान्त और बरार में हुआ जहां हमें आज भी यह देखने को मिलता है कि समस्त शिक्षा विभाग में एक खास सम्प्रदाय के लोगों के अतिरिक्त अन्य किसी सम्प्रदाय का एक भी व्यक्ति नहीं है। ऐसे कई विभाग हैं जहां 90 प्रतिशत तथा इससे भी अधिक पदधारी एक ही विशिष्ट सम्प्रदाय के होते हैं।

श्रीमान, यदि यह साम्प्रदायिकता नहीं है तो फिर साम्प्रदायिकता क्या है? और ये लोग जो उस विभाग में प्रत्येक स्थान पर अब आसन जमाये हुए हैं इस बात का ध्यान रखते हैं कि यदि कोई अन्य व्यक्ति उस विभाग में आना चाहे तो उसे न आने दिया जाये। क्या यह साम्प्रदायिक नहीं है? एक सम्प्रदाय जो समस्त जनसंख्या का 3 से लेकर 5 तक प्रतिशत है, क्या जहां तक प्रत्येक विभाग का सम्बन्ध है वही उस समस्त प्रान्त पर शासन करना भाग्य में लिखा लाया है? क्या यह उदारता नहीं होगी कि जिन लोगों को कभी कोई ऐसे स्थान नहीं दिये गये हैं और जो इसकी मांग करते चले आ रहे हैं उनको कम से कम कुछ स्थान दे दिये जायें? इस सभा के उन सदस्यों से जो दक्षता तथा योग्यता के गुणगान द्वारा ले

[डॉ. पी.एस. देशमुख]

लिये गये हैं मैं यह कह सकता हूं कि दक्षता में न मद्रास को और न बम्बई को इस सीमा तक क्षति हुई है कि वह देश के लिये अहितकर हो। सम्भव है स्तर कुछ नीचे गिर गया हो, पर इतना तो हमने सदैव बरदाश्त किया है। जब हम अंग्रेजों से मुकाबला न कर सके तो अंग्रेजों से हमने भारतीयों के लिये स्थानों की मांग की। हम आई.सी.एस. की भरती में वृद्धि करना चाहते थे। हमने उसके लिये संघर्ष किया और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के सत्र तक में हमने इस विषय के संकल्प पारित किये। पर जब यही बात और लोग चाहते हैं तो हम उसे साम्प्रदायिकता कहते हैं। मैं निवेदन करता हूं कि सबके साथ न्याय करने के लिये काफी गुजाइश है। मद्रास और बम्बई में जहां कि इस प्रथा का पालन किया जा रहा है वहां इसके कारण दक्षता का संहार नहीं हुआ है और न प्रशासन में कोई बड़ी हानि हुई तथा न कोई संकट पैदा हुआ है। जब हमारा यह अनुभव है तो किसी संकट के पूर्व ही अन्य प्रान्त बुद्धिमानी से काम क्यों नहीं लेते हैं और जनसंख्या के अन्य भागों के साथ सहानुभूतिपूर्वक विचार करने का क्यों प्रयत्न नहीं करते हैं। यह विचार 85 प्रतिशत से भी अधिक जनता की ओर से है और इस कारण इसे साम्प्रदायिक नहीं कहा जा सकता है। यदि आप सम्प्रदायों अथवा जातियों का नाम लेना नहीं चाहते हैं तो अन्य ऐसी रीतियां हैं जिनके द्वारा आप ऐसा कर सकते हैं। मैं निवेदन करता हूं कि इस मांग पर अधिक सहानुभूतिपूर्वक विचार होना चाहिये और चूंकि प्रतिनिधित्व के लिये हमने जनसंख्या का आधार स्वीकार कर लिया है इसलिये जहां तक भर्ती का सम्बन्ध है उसमें भी हमें जनसंख्या के आधार को मानना चाहिये।

मैं जिस बात पर जोर देना चाहता था उस पर किसी विशिष्ट सम्प्रदाय का उल्लेख किये बिना, किसी विशिष्ट सम्प्रदाय का विरोध किये बिना मैं जोर दे चुका हूं। जो कुछ मैं चाहता हूं वह यह है कि संसद तथा विधान-मण्डल इस बात को देखने के लिये स्वतन्त्र होने चाहिये। भारत के समस्त वर्गों और समस्त सम्प्रदायों के लिये ठीक-ठीक प्रतिनिधित्व हो। मैंने यह विशेष रूप से नहीं कहा है कि किसी एक सम्प्रदाय को अधिमान या प्राथमिकता दी जाये—मैं तो यह चाहता हूं कि उचित विभाजन हो जिससे कि भारत की एकता और स्वतन्त्रता सच्ची तथा अकृत्रिम हो। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि भारत का विकास एक देशीय हुआ है। जहां तक सांस्कृतिक विषयों का सम्बन्ध है, जहां तक जीवन के सुसभ्यता युक्त उपकरणों का सम्बन्ध है 80 प्रतिशत जनता उसमें भाग ही नहीं लेती है। जहां तक इनका सम्बन्ध है वे अविदित से हैं; उनके और लोगों के बीच में एक बड़ा मोटा परदा पड़ा हुआ है और जब तक कि प्रत्येक सम्प्रदाय—विशेषकर वे सम्प्रदाय जो अपेक्षाकृत बड़े तथा अधिक लोकप्रिय हैं—समान रूप में, उन्नति नहीं करेंगे और उन्नत सम्प्रदाय निम्न सम्प्रदायों को उन्नति करने का अवसर नहीं देंगे तब तक भारत की उन्नति असम्भव है। जो कुछ मैं चाहता हूं वह यह है कि उन करोड़ों लोगों के साथ न्याय तथा उचित व्यवहार किया जाये जिनकी स्थिति ऐसी नहीं है कि वे आगे बढ़कर आप से मुकाबला करें और ऐसा कह कर मैं किसी साम्प्रदायिकता का पुर:स्थापन नहीं कर रहा हूं, किसी भेदभाव का पुर:स्थापन नहीं कर रहा हूं। इन बातों का प्रत्यत्न किया जा चुका है और उनमें सफलता मिली है तो फिर ऐसी कोई बात नहीं है कि और अधिक सफलता क्यों नहीं मिलेगी।

कल जब मेरे मित्र श्री लक्ष्मीनारायण खड़े हुए तो विद्युत द्वीपों के बुझ जाने के रूप में अपशकुन हुआ। मैं समझता हूं कि इस अनुच्छेद के पारित होने के विरोध में ईश्वर हमें चेतावनी देना चाहता है। जब डॉ. अम्बेडकर बोलने के लिए बड़े हुए तब भी ऐसा ही हुआ। अच्छा होता यदि इन अनुच्छेदों के अन्तिम मसौदे पर कुछ और अधिक सावधानी की जाती और कुछ और अधिक बुद्धिमानी का प्रयोग किया जाता—और मैं आशा करता हूं कि यदि मेरे 86 या 88 संशोधनों में से एक स्वीकार कर दिया जायेगा तो मसौदा-समिति द्वारा विचारे गये लोक सेवा आयोग के ढांचे में कोई कमी नहीं होगी। आखिर खण्ड (4) में उन्हें यह कहना पड़ा:

"(4) खण्ड (3) की किसी बात यह अपेक्षा न होगी कि लोक-सेवा आयोग से उस रीति के बारे में परामर्श किया जाये जिससे संघ अथवा राज्य के किसी पिछड़े वर्ग के नागरिकों की नियुक्ति की जाती है या उनके लिये पद रक्षित रखे जाते हैं।"

जो कुछ मैं बढ़ाना चाहता हूं वह यह है कि चूंकि "पिछड़े वर्गों" की शायद बड़े संकुचित तथा संकीर्ण रूप में परिभाषा की जायेगी अत: केवल अनुसूचित जातियों का ही यह दावा नहीं है कि वे पिछड़े हुए हैं—केवल जनजाति के लोग ही ऐसे नहीं हैं कि उनको पिछड़ा हुआ समझा जाये, वरन् ऐसे करोड़ों अन्य लोग हैं जो इनसे भी ज़्यादा पिछड़े हुए हैं और उनके वर्गों की उन्नति के लिये न कोई नियम है और न कोई गुंजाइश। उन सम्प्रदायों में शिक्षा बहुत ही कम है। समस्त भारत में 15 प्रतिशत साक्षरता है। यदि आप इसका विश्लेषण करें तो आपको विदित हो जायेगा कि लगभग आधे दर्जन सम्प्रदायों में 90 प्रतिशत तक साक्षरता है और अन्य सम्प्रदाय 98 प्रतिशत तक निरक्षर हैं। ऐसे सम्प्रदाय हैं जिनकी जनसंख्या चाहे करोड़ों तक हो पर उनमें साक्षरता 5 प्रतिशत से अधिक नहीं है।

इंग्लैण्ड या अमरीका की ओर दृष्टि डालने से कोई लाभ नहीं। मुझे आश्चर्य हुआ है कि किसानों की उन्नति के बड़े हिमायती मेरे माननीय मित्र श्री लक्ष्मीनारायण साहू कुछ और ही विचार लेकर प्रस्तुत हुए और इन बातों पर कोई ध्यान नहीं दिया। (एक माननीय सदस्य—अच्छा हो यदि निरक्षरों को शिक्षा देने का आप प्रयत्न करें।) निरक्षरों को शिक्षा देने का कार्य तो ईश्वर ही करेगा। हम जानते हैं कि इस सम्बन्ध में कुछ भी नहीं हो रहा है। और आप एक दिन में उसे कर भी नहीं सकते। किसी भी रीति द्वारा यह नहीं हो सकता है। यही आप अनुसूचित जातियों से भी कह देते कि धीरे-धीरे उनको शिक्षा दी जायेगी और धीरे-धीरे उन्नत वर्ग होश में आ जायेगा और अस्पृश्यता अपने आप मिट जायेगी। इसलिये क्यों आन्दोलन करते हो क्यों मांग रखते हो। यह सब अपने आप तुम को मिल जायेगा चाहे सौ वर्ष बाद ही मिले। "आपको रक्षण के लिये मांग करने की कोई आवश्यकता नहीं है"। मुझे शक है कि इस मंत्रणा से किसी का भी समाधान नहीं होगा। हम को यह समझ लेना चाहिये कि चाहे हम चाहें या न चाहें पर यही मांग रही है और यही मांग रहेगी और जितना आप उसे रोकेंगे या दबायेंगे उतनी ही अधिक उग्र और अदमनीय वह होती चली जायेगी।

***सरदार हुकम सिंह:** श्रीमान, मैं अपने संशोधन संख्या 83 को पेश नहीं कर रहा हूं।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** (पश्चिमी बंगाल: मुस्लिम): श्रीमान, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (पंचम सप्ताह) के संशोधन संख्या 12 में प्रस्थापित अनुच्छेद 286 के खण्ड (3) के परन्तुक के पश्चात् यह नया परन्तुक जोड़ दिया जाये।"

'Provided further that the Public Service Commission of the Union shall always be consulted where the service carries a maximum pay of Rs. 500 per month and the State Public Service Commission shall always be consulted where the service carries a maximum pay of Rs. 250.' "

(पर यह और भी कि संघ के लोक-सेवा आयोग से सदैव परामर्श किया जायेगा यदि किसी सेवा के लिये अधिकतम वेतन 500 रुपये है और राज्य के लोक सेवा आयोग से सदैव परामर्श किया जायेगा यदि किसी सेवा के लिये अधिकतम वेतन 250 रुपय है।)

इसके बाद के संशोधन संख्या 85 को भी मैं पेश करता हूं:

"संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (पंचम सप्ताह) के संशोधन संख्या 12 में प्रस्थापित अनुच्छेद 286 के खण्ड (4) को अपमार्जित किया जाये।"

प्रस्थापित अनुच्छेद 286 के खण्ड (3) में एक नया परन्तुक जोड़ने के हेतु मेरे पहले संशोधन के सम्बन्ध में यह बात है कि खण्ड (3) के पहले परन्तुक में यह उपबन्ध किया गया है कि यथास्थिति राष्ट्रपति, राज्यपाल या शासक यह निदेश दे सकेगा कि सेवाओं के कुछ वर्ग सम्बन्धी विषयों के लिये "यह आवश्यक नहीं होगा कि लोक-सेवा आयोग से परामर्श किया जाये"। यह राष्ट्रपति, राज्यपाल तथा शासक को यह विनिश्चय करने का स्वविवेक देता है कि लोक-सेवा आयोग के समक्ष विशिष्ट प्रकार की सेवा सम्बन्धी किन-किन विषयों को या किन-किन सेवाओं को रखा जाये और किन-किन विषयों को लोक-सेवा आयोग के समक्ष रखना इन प्राधिकारियों की इच्छा पर निर्भर है।

मेरा संशोधन एक परिसीमा की व्यवस्था करता है। राष्ट्रपति अथवा राज्यपाल अथवा शासक के स्वविवेक पर नहीं वरन् उस समय शक्ति प्राप्त मन्त्रिमण्डल के स्वविवेक पर प्रथम परन्तुक द्वारा अनिर्बन्धित शक्ति का अनुदान संकटजनक होगा। लोक-सेवा आयोग का मुख्य उद्देश्य यह है कि परीक्षाओं तथा अन्य प्रकारों के द्वारा बिना किसी पक्षपात तथा भय के योग्य अभ्यर्थियों को चुनकर देश के लिये एक सक्षम तथा विश्वस्त तंत्र की व्यवस्था करे। लोक-सेवा आयोग की स्वतन्त्रता राजनीति से उदासीनता और समुन्नति स्थिति ही उसकी उपादेयता है। सभा को इस बात पर विचार करना चाहिये कि विशिष्ट सेवा सम्बन्धी विषयों को लोक-सेवा

आयोग के समक्ष न रखने का अधिकार कहां तक राष्ट्रपति, राज्यपाल या शासक को दिया जाये।

मैं निवेदन करता हूं कि कुछ परिसीमा होनी चाहिये। यदि वह राष्ट्रपति, राज्यपाल या शासक के वैयक्तिक उत्तरदायित्व का प्रश्न होता तो बात दूसरी थी। पर वैयक्तिक रूप में तो राष्ट्रपति, राज्यपाल या शासक की कोई सत्ता नहीं है और उस दशा में इन बातों को उसके स्वविवेक पर छोड़ा जा सकता है। पर इस परन्तुक द्वारा इन प्राधिकारियों को वह शक्ति सौंपने का प्रयास किया जा रहा है जिसमें उनका कोई स्वविवेक नहीं रहता है अपितु मन्त्रिमण्डल को अपने वैयक्तिक प्रयोजन सिद्ध करने के लिये अपने पवित्र नाम का उपयोग कर प्रकार्य करते रहने का अवसर मिलता है। यह तो हम जानते ही हैं और यह खुले आम कहा जाता है कि उच्चतम क्षेत्र से लेकर निम्नतम क्षेत्र तक नियुक्तियां करने में पक्षपात किया जाता है। कभी-कभी प्रत्याशित नियुक्तियां—अस्थायी नियुक्तियां कर लोक-सेवा आयोग की उपेक्षा की जाती है और फिर इस मान्य तथ्य को लेकर सेवा आयोग के समक्ष जाने का प्रयत्न किया जाता है कि यह अभ्यर्थी बिचारा बड़ी दु:खद स्थिति में है और इसने कुछ काल तक आम किया है और अनुभव प्राप्त कर लिया है इत्यादि इत्यादि और इस कारण इनका विशेष ध्यान रखा जाये। दोनों केन्द्र और प्रान्त के मन्त्रियों की यह प्रवृत्ति है और बहुत ही स्वाभाविक प्रवृत्ति है कि यहां तक कि वे वर्तमान नियमों की उपेक्षा करते हैं और यदि हम इस परन्तुक को यह जैसा है वैसा ही रहने देते हैं तो इसका आशय यह होगा कि कोई भी मन्त्रालय सेवा के किसी विशिष्ट प्रकार के वर्ग को लोक-सेवा आयोग के क्षेत्राधिकार से पृथक रखना आवश्यक समझेगा। मैं निवेदन करता हूं कि यह कारण किसी प्रकार की परिसीमा पुर:स्थापन करने के लिये पर्याप्त रूप से न्यायसंगत है। नये परन्तुक के द्वारा जिस अर्हता को मैं पुर:स्थापन करना चाहता हूं वह यह है कि संघ सेवाओं के लिये जिस सेवा का अधिकतम वेतन 500 रुपये हो और राज्य सेवाओं के लिये जिस सेवा का वेतन 250 रुपये हो तो उनको लोक-सेवा आयोग में भेजना केन्द्रीय या राज्य के प्राधिकारियों के लिये अनिवार्य होगा।

सिद्धान्त के रूप में मैं इस सीमा का प्रश्न उठाना चाहता हूं और 500 रुपये अथवा 250 रुपये की जो सीमा मैंने रखी है वह वाद-विवाद के लिये केवल आधार स्वरूप है। मेरी उत्कण्ठा तो मुख्यतया सिद्धान्त के प्रति है, और वास्तविकता परिसीमा सभा चाहे जो कुछ स्वीकार करे उसके प्रति मैं विशेष उत्सुक नहीं हूं। उसका सुझाव तो मैंने केवल वाद-विवाद का सूत्रपात करने के लिये किया है। मैं निवेदन करता हूं कि सिद्धान्त रूप में राष्ट्रपति अथवा राज्यपाल या शासक में लोक-सेवा आयोग के क्षेत्राधिकार से कुछ सेवा के वर्गों को पृथक् कर देने की शक्ति स्वीकार कर लेनी चाहिये। चपरासियों या छोटे-मोटे बाबुओं के पद अथवा छोटे-छोटे पदों के लिये स्पष्टतया कोई अपेक्षा नहीं है कि उनको लोक-सेवा आयोग के समक्ष रखा जाये।

अत: मैंने दो महत्वपूर्ण सिद्धान्तों को रखा है कि कुछ सेवायें तो ऐसी होनी चाहियें जिनमें इन प्राधिकारियों को कुछ स्वविवेक होना चाहिये और कुछ सेवायें ऐसी होनी चाहिये जिन्हें लोक-सेवा आयोग में भेजने से रोकने का अधिकार इन प्राधिकारियों को न हो। इस नये परन्तुक के द्वारा जिस सिद्धान्त की मैं स्थापना

[श्री नज़ीरुद्दीन अहमद]

करना चाहता हूं वह यह है कि कुछ उच्च सेवाओं के लिये यह अनिवार्य कर दिया जाये कि ये प्राधिकारी उनको लोक-सेवा आयोग के समक्ष अवश्य रखें। मैं चाहता हूं कि पहले इस सिद्धान्त पर वाद-विवाद हो और फिर जो वास्तविक वेतन अथवा अन्य सीमा निर्धारित की जाये उनको लिया जाये जो कि यदि यह सिद्धान्त स्वीकार कर लिया जाता है तो केवल समायोजन के विषय हो जायेंगे।

नियुक्तियों के विषय में हमें बहुत प्रवाद सुनाई देते हैं जिनसे यह प्रकट होता है कि इस विषय में बहुत अधिक सावधानी की आवश्यकता है और मन्त्रियों को इस बात की स्वतन्त्रता देने की आवश्यकता नहीं है कि वे संघ या राज्य के लोक सेवा आयोग के क्षेत्र को संकुचित करें। सदैव यह प्रवृत्ति रही है कि लोक सेवा आयोग की उपेक्षा की जाये और यदि इस मूल परन्तुक को इसी रूप में रहने दिया जाता है तो लोक सेवा आयोग की उपेक्षा करने का संकट और भी अधिक हो जायेगा।

इसके बाद जो संशोधन मैंने पेश किया है वह अनुच्छेद 286 के खण्ड (4) के सम्बन्ध में है। यह खण्ड पिछड़े वर्गों के लिये नियुक्तियां रक्षित रखने के सम्बन्ध का है जिसके सम्बन्ध में इस खण्ड में यह कहा गया है कि लोक-सेवा आयोग से परामर्श करना आवश्यक नहीं है। इसमें फिर सिद्धान्त का एक बड़ा महत्वपूर्ण प्रश्न उठ खड़ा होता है। खण्ड (4) के ठीक-ठीक अर्थ में सन्देह है। संविधान को हम इतनी जल्दी में पारित कर रहे हैं कि उस पर विवरण पूर्वक उचित ध्यान देना असम्भव है। पर मैं समझता हूं और ऐसा ही अन्य माननीय सदस्य भी समझते होंगे कि पिछड़े वर्गों की नियुक्तियों के विषय को खण्ड (4) लोक-सेवा आयोग के क्षेत्र से पृथक् रखने का प्रयास करता है। मैं यह मानता हूं कि पिछड़े वर्गों के लिये विशिष्ट व्यवहार आवश्यक है। इस पर किसी को ईर्ष्या नहीं है। यही तथ्य कि वे पिछड़े हुए हैं इस बात के लिये पर्याप्त है कि उनके साथ कुछ सहानुभूति तथा नीतिपूर्वक व्यवहार किया जाये। यह सच है कि पिछड़े वर्ग शिक्षा, नैतिकता, वित्तीय और अन्य विषयों में पिछड़े हुए हैं।

***डॉ. पी.एस. देशमुखः** उनकी नैतिकता तो अच्छी है।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** हां, यह बात ठीक है। डॉ. देशमुख का सुझाव कि उनकी नैतिकता अपेक्षाकृत अच्छी है बिल्कुल ठीक है। अनजाने में मुझसे यह त्रुटि हो गई कि मैंने ऐसा कह दिया; अतः इस त्रुटि सुधार के लिये मैं कृतज्ञ हूं। शिक्षा तथा अन्य क्षेत्रों में वे पिछड़े हुए हैं। इस सम्बन्ध में उनके साथ विशिष्ट व्यवहार करना आवश्यक है। जिस विशिष्ट व्यवहार का मैं सुझाव दूंगा वह यह है कि इन वर्गों के लिए किसी पद के सम्बन्ध में निम्नतम शिक्षा स्तर निर्धारित किया जाये क्योंकि लोक-सेवा की दक्षता को हम गिरा नहीं सकते हैं। मान लीजिये पिछड़े वर्ग का कोई अभ्यर्थी है जो उस पद के लिये आवश्यक निम्नतम अर्हता रखता है और एक दूसरे वर्ग का अभ्यर्थी है जिसकी अर्हता पहिले के अभ्यर्थी से उच्च है तो पिछड़े वर्ग के अभ्यर्थी को लिया जाये क्योंकि उसको रक्षित रखना है और वह निम्नतम अर्हता रखता है। इस प्रकार पिछड़े वर्गों को कुछ रक्षण मिल जायेगा।

पर ऐसा कोई कारण नहीं है कि उनको लोक-सेवा आयोग के क्षेत्र से पृथक् क्यों रखा जाये पिछड़े वर्ग के उन अभ्यर्थियों को, जो निम्नतम अर्हता रखते हैं, अन्य वर्गों के उच्च अर्हता प्राप्त अभ्यर्थियों के स्थान में लेना आयोग पर छोड़ा जाये। इस प्रकार हम पिछड़े वर्गों की सेवा कर सकेंगे और आयोग को अभ्यर्थियों की समुचित योग्यता का सुनिश्चयन हो जायेगा। अतः मैं सुझाव देता हूं कि उनके विषय को आयोग को सिफारिश के लिये भेजा जाये, पर प्रसंगवर्ती सेवा के लिये पर्याप्त अर्हताओं का निदेश होना चाहिये। अतः आयोग के क्षेत्र से इन वर्गों के पृथक् करने में मैं कोई न्यायसंगत बात नहीं देखता हूं।

श्रीमान्, 'shall' के स्थान में 'may' रखने का मेरे मानीय मित्र डॉ. देशमुख के संशोधन का अनुच्छेद 286 (3) के प्रवर्त्तन पर बुरा प्रभाव पड़ेगा। प्रसंग में 'shall' शब्द कहीं अधिक उपयुक्त है। उदाहरणीय खण्ड (क) भर्ती की रीति के सम्बन्ध में है। इसमें सिद्धान्त का प्रश्न उठता है और यह अच्छा है कि भर्ती की रीति विनिश्चय करने के लिये कार्यपालिका आयोग से परामर्श करे यद्यपि यह आवश्यक नहीं है। कि कार्यपालिका आयोग के विचारों को स्वीकार करे। इस सम्बन्ध में मेरे विचार से 'shall' अधिक अच्छा शब्द है।

इसके पश्चात् खण्ड (ख) उस सिद्धान्त की ओर निर्देश करता है जिसका पालन नियुक्तियां करने में किया जायेगा। यह भी एक सिद्धान्त का प्रश्न है जिस पर आयोग से परामर्श होना चाहिये। खण्ड (ग) अनुशासी कार्यावाही की ओर निर्देश करता है। किसी भी कार्यवाही करने से पूर्व इन विषयों को अनिवार्यतः आयोग के सामने रखना चाहिये। कभी-कभी बाबू और पदाधिकारियों को अपने उच्च पदाधिकारियों की अप्रसन्नता शिकार बनना पड़ता है और उनको अलग कर दिया जाता है। हानिपूर्ति के लिये तथा दुबारा नियुक्त होने के लिए इन लोगों को न्यायालय की शरण लेनी पड़ती है। पर यह अच्छा है कि इन विषयों को अनिर्वायतः आयोग के सामने रखा जाये जिससे कि अन्याय का निराकरण हो सके और ऐसा करने से न्यायालयों में मुकदमों की संख्या भी कम हो जायेगी।

उपखण्ड (घ) उस विषय से सम्बन्ध रखता है जिसमें कोई पदाधिकारी अपने पदाधिकार के आधार पर कोई कार्यवाही करता है या विचार करता है, तो इस सम्बन्ध में उसे किसी पर मुकदमा चलाना होता है या अन्य व्यक्ति द्वारा चलाये गये मुकदमे की पैरवी करनी पड़ती है और उसमें व्यय की आवश्यकता होती है। इन विषयों में भी लोक-सेवा आयोग से अनिवार्यतः परामर्श करना चाहिये। और निवृत्ति वेतन तथा अन्य मांगों के विषयों को भी अनिवार्यतः आयेाग के समक्ष रखना चाहिये। अतः मैं निवेदन करता हूं कि हमें 'may' के बजाय 'shall' शब्द ही रखना चाहिये क्योंकि इस शब्द से सब विषयों में न्याय का सुनिश्चियन हो जाता है।

विभिन्न वर्गों के लिये उचित प्रतिनिधित्व प्राप्त करने का डॉ. देशमुख का संशोधन मानने योग्य है। यह सत्य है कि वर्गों तथा सम्प्रदायों में परस्पर भेदविभेद करना मिटा दिया है, पर इधर उधर ऐसे कुछ भाग हो सकते हैं और विभिन्न वर्गों के लिये उचित प्रतिनिधित्व के सम्बन्ध में आयोग के विनिश्चय का स्वागत होगा और यह विषय आलोचना के परे होगा। अतः मैं निवेदन करता हूं कि इस संशोधन को स्वीकार किया जाये।

[श्री नज़ीरुद्दीन अहमद]

संविधान में अन्य जल्दबाजी के क्षेपकों से असमान रूप का यह अनुच्छेद 286-क एक बड़ा अच्छा अनुच्छेद है। इसमें लोक-सेवा आयोग द्वारा राष्ट्रपति को अथवा राज्य पालक को अथवा शासक को उन विषयों के बारे में एक प्रतिवेदन की व्यवस्था की गई है जिनमें लोक-सेवा आयोग द्वारा दी सिफारिश नहीं मानी गई है या उसकी उपेक्षा की गई है। ऐसे उदाहरणों की कमी नहीं है जिनमें उसकी सिफारिश की उपेक्षा की जाती है या उसको निर्देश दिये बिना नियुक्तियां कर ली जाती हैं। संसद को यह पता ही नहीं है कि किस प्रकार से ऐसे काम किये जाते हैं और क्या रंग ढ़ंग हैं और यदि प्रश्न रखे भी जाते हैं तो उनको इस आधार पर नहीं रखने दिया जाता है कि वे अनावश्यक रूप से प्रशासन सम्बन्धी विवरण के क्षेत्र में प्रवेश करते हैं। सरकार द्वारा कार्यवाही करने पर और लोक-सेवा आयोग के बिना परामर्श के नियुक्तियां करने पर या उसकी सिफारिश की उपेक्षा करने पर अनुच्छेद 286-क एक स्वाभाविक अवरोध की व्यवस्था करता है। यह प्रतिवेदन आवश्यक कार्यवाही के लिये संसद के समक्ष रखा जायेगा। मैं समझता हूं कि यह कल्याणकारी उपक्रम है। संसद के सदस्य और यहां तक कि जनता को भी यह विचार करना चाहिये कि किन-किन मामलों में आयोग की सिफारिश की न्यायोचित रूप में उपेक्षा की गई है और किन-किन मामलों में अन्यायपूर्ण तथा मनमाने ढ़ंग से उपेक्षा की गई है। अत: इस नये खण्ड का मैं समर्थन करता हूं। अन्य अनुच्छेदों को तो हमें स्वीकार करना ही है क्योंकि जितनी तीव्र गति से मसौदा-समिति अग्रसर हो रही है उतनी तीव्र गति से अग्रसर होने के लिये न तो हमारे पास समय है और न अवसर।

अब थोड़े से शब्दों के सहित मैं सुझाव रखता हूं कि मेरे संशोधन पर उचित रूप से विचार किया जाये न कि सभापति मसौदा समिति की इस आलोचना पर कि इसका उत्तर देना वे आवश्यक नहीं समझते हैं उसको अलग फेंक दिया जाये। कभी-कभी आरम्भ में सभापति यह कह देते हैं कि अनुच्छेद स्वयं व्याख्यात्मक हैं और अन्त में वे यह कह देते हैं कि वे नहीं समझते हैं कि कोई उत्तर आवश्यक है। इन टिप्पणियों से हम यह नहीं समझ पाते हैं कि हम किस स्थिति में हैं। मैं सभा से निवेदन करता हूं कि गुणावगुण के आधार पर संशोधनों पर विचार किया जाये और पूर्व विचार-विमर्श के पश्चात् जो अनुचित हों और ठीक न हों उनको अस्वीकार किया जाये।

आपकी अनुमति से मैं संशोधन संख्या 91 को भी पेश करूंगा, जो इस प्रकार है:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (पंचम सप्ताह) के संशोधन संख्या 16 में प्रस्थापित अनुच्छेद 287 में 'or other body corporate' शब्दों के स्थान में 'or other body corporate not being a Company within the meaning of the Indian Companies Act 1913 or banking companies within the meaning of the Banking Companies Act 1949' शब्द प्रविष्ट किये जायें।"

अनुच्छेद 287 इस प्रकार है:

"यथास्थिति संसद द्वारा निमित अथवा राज्य के विधान-मण्डल द्वारा निर्मित कोई अधिनियम संघ लोक-सेवा आयोग या राज्य लोक-सेवा आयोग द्वारा संघ की या राज्य की सेवाओं के बारे में, तथा किसी स्थानीय प्राधिकारी अथवा विधि द्वारा गठित अन्य निगम निकाय अथवा किसी सार्वजनिक संस्था की सेवाओं के बारे में भी अतिरिक्त कृत्यों के प्रयोग के लिये उपबन्ध कर सकेगा।"

मैं निवेदन करता हूं कि यह अनुच्छेद यह प्राधिकृत करता है कि स्थानीय प्राधिकारी सम्बन्धी सेवाओं के विषय को लोक-सेवा आयोग के पास भेजा जाये। यह बहुत आवश्यक उपबन्ध है। बल अथवा स्वीय स्वार्थों के कारण स्थानीय प्राधिकारी बहुदा उन व्यक्तियों को नियुक्त कर लेते हैं जिनकी अर्हतायें कम होती हैं। इन नियुक्तियों के विषयों को लोक-सेवा आयोग के पास सम्मति के लिये भेजना बहुत ही समुचित होगा।

पर मैं "अन्य निगम निकाय" शब्दों की प्रविष्टि के विरोध में हूं। निगम निकाय दामोदर घाटी निगम अथवा औद्योगिक वित्त निगम के समान होता है। वे अंश सरकारी प्राधिकार होते हैं जिनकी स्थापना विशिष्ट अधिनियम के प्राधिकार के अधीन की जाती है। इनके लिये भी लोक-सेवा आयोग को निर्देश करना वांछनीय होगा। परन्तु अन्य प्रकार के भी निगम निकाय भी होते हैं जैसे कि लोक अथवा लिमिटेड कम्पनी। गैर सरकारी निकाय होते हैं यद्यपि हैं "निगम निकाय" और उनके विषयों का सम्बन्ध अंशवाहकों से रहता है। पर अंशवाहकों और जनता के हितों की रक्षा के लिये कुछ सरकारी नियंत्रण रखा जाता है। अपना काम चलाने के लिये ये निकाय जो नियुक्तियां करते हैं उसके सम्बन्ध में मैं समझता हूं कि लोक-सेवा आयोग को निर्देश करने की प्रणाली का पुर:स्थापन करना अनुचित होगा। व्यापार में दक्षता ही एक मात्र कसौटी है। यह हो सकता है कि कोई व्यक्ति अधिक शिक्षित न हो पर उसे वृत्ति विषयक उच्च अनुभव हो सकता है। मैं ऐसे विशेषज्ञों से परिचित हूं जो कोयले की खानों या फोलाद या लोहे के कारखानों अथवा ऐसे ही अन्य कारखानों में काम करते हैं और जो केवल देखकर ही कोयले की कोटि अथवा कच्चे लोहे के नमूने में लोहा या फौलाद का प्रतिशत अंश बता देते हैं। वे अपने काम के विशेषज्ञ होते हैं और उनको ऊंचे-ऊंचे वेतन दिये जाते हैं यद्यपि आवश्यक शैक्षणिक अर्हतायें उनमें बहुत नहीं होती हैं। यदि उनके विषय को लोक सेवा आयोग के समक्ष रखा जाता है तो वे कहीं के न रहेंगे। वे किसी विश्वविद्यालय के स्नातक नहीं है और जितने भी स्वीकृत स्तर हो सकते हैं उनमें वे कहीं भी नहीं आते हैं। वास्तव में प्रबन्धक और प्रबन्धकारी अभिकर्त्ता या विशेषज्ञ की व्यापारिक केन्द्रों का काम देखने वालो के लिये नियुक्ति के सम्बन्ध में कोई अर्हता अपेक्षित नहीं है सिवाय अनुभव और दक्षता के। उनके सेवाययोजक उन्हें जानते हैं। पर उनके बारे में लोक सेवा आयोग कोई निश्चय तथा अनुमान नहीं कर सकता है। इन विषयों को लोक सेवा आयोग को भेजने से कठिनाइयां और रुकावटें पैदा हो जायेंगी और अदक्षता उत्पन्न हो जायेगी और सम्बद्ध कम्पनी के व्यापार संचालन में देर होगी। अत: मेरा विचार है कि कम्पनी अधिनियम के

[श्री नज़ीरुद्दीन अहमद]

अर्थान्तर्गत 'कम्पनियां' ही निगम निकाय हैं, पर मेरा विश्वास है कि उनके ऊपर नियंत्रण करने का विचार नहीं है। मैं समझता हूं उनको रखने का उद्देश्य नहीं है। पर अनुच्छेद में 'अथवा अन्य निगम निकाय' शब्दों का तर्कसम्मत अर्थ यही होगा। लोक कम्पनी तथा बैंक कम्पनी भी अवश्य ही निगम निकाय होंगी। पर यह स्पष्ट है कि लोक सेवा आयोग के क्षेत्राधिकार के अन्तर्गत रखने के योग्य से विषय नहीं हैं। अतः आयोग पर यह परिसीमा वांछनीय होगी। यदि हम अनावश्यक रूप के व्यापक शब्द रखेंगे और उनके प्रयोग को सीमित नहीं करेंगे तो फल यह होगा कि गैर सरकारी व्यापारिक निकायों अथवा इसी प्रकार के केन्द्रों में राज्य का हस्तक्षेप असह्य होगा और इसके कारण अदक्षता पैदा हो जायेगी। अतः मैं निवेदन करता हूं कि इस अपवाद का उपबन्ध इस संविधान में स्पष्ट रखा जाये।

***श्री आर.के. सिधवा** (मध्यप्रान्त और बरारः जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (पंचम सप्ताह) के संशोधन संख्या 12 में प्रस्थापित अनुच्छेद 286 के अन्त में निम्न नया खण्ड जोड़ दिया जाये:

'(6) The Commission shall submit to the Legislature every year a report setting out all cases, the Governments' reasons in each case, and the Commission's views thereon, where there is difference of opinion.'"

[(6) आयोग प्रति वर्ष विधान-मण्डल को एक प्रतिवेदन भेजेगा जिसमें वे सब मामले जिन पर मतभेद है, उन मामलों पर सरकार के कारण और आयोग के विचार होंगे।)]

श्रीमान, मेरा संशोधन बड़ा सरल है। मेरे मित्र डॉ. अम्बेडकर द्वारा पेश किये गये अनुच्छेद के अधीन राष्ट्रपति के लिये यह आवश्यक नहीं है कि सब विषयों में लोक-सेवा आयोग से परामश करे। कुछ विषयों में उसे परमाधिकार है कि वह जो कुछ चाहे करे और यह हो सकता है कि उसके विचार लोक-सेवा आयोग के विचारों के विरोध में हों।

***अध्यक्षः** श्री सिधवा, क्या अनुच्छेद 288-क में आपकी बात नहीं आ जाती है?

***श्री आर.के. सिधवाः** 288-क में केवल यह कहा गया है:

"संघ आयोग का कर्तव्य होगा कि राष्ट्रपति को आयोग द्वारा किये गये काम के बारे में प्रति वर्ष प्रतिवेदन दे तथा ऐसे प्रतिवेदन के मिलने पर राष्ट्रपति उन मामलों के बारे में, यदि कोई हों, जिनमें कि आयोग का परामर्श स्वीकार नहीं किया गया, ऐसी अस्वीकृति के लिये कारणों को स्पष्ट करने वाले ज्ञापन से सहित उस प्रतिवेदन की प्रतिलिपि संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष रखवायेगा।"

इसमें केवल यह कहा गया है कि जिन मामलों में सरकार लोक-सेवा आयोग की सिफारिश स्वीकार नहीं करती है उनको संसद के समक्ष रखा जाये। मेरा संशोधन यह है कि यदि आयोग सरकार के विचार को स्वीकार न करे तो उसे भी संसद के समक्ष प्रस्तुत करना चाहिये जिससे कि संसद् को दोनों लोक-सेवा आयोग और सरकार के दृष्टिकोण से परिचय हो जाये। ऐसा सम्भव हो सकता है कि सरकार यह अनुभव करे कि उसके विचार ठीक है और लोक-सेवा आयोग उन्हें न स्वीकार करे। अन्य मामलों में आयोग यह समझे कि सरकार के विचार ठीक नहीं हैं। और इस प्रकार संघर्ष हो सकता है। मैं यह चाहता हूं कि संसद के सदनों को दोनों पक्ष के विचारों का ज्ञान हो जिससे कि वे यह निर्णय कर सकें कि सरकार ठीक है या आयोग।

***श्री राजबहादुर** (मत्स्य संयुक्त राज्य): श्रीमान, माननीय सदस्य की बात स्पष्ट समझ में नहीं आती है क्योंकि वे वास्तव में अध्यक्ष की ओर मुख किये हुए हैं।

***श्री आर.के. सिधवा:** मैं यह कह रहा था कि कुछ मामलों में सरकार यह समझे कि वह सही मार्ग पर है और आयोग यह समझे कि वह सही मार्ग पर है अत: यह उचित है कि संसद दोनों पक्ष के विचारों से अवगत हो जिससे कि वह यह जान सके कि आयोग ठीक था या सरकार। अत: जो संशोधन मैंने पेश किया है। वह मेरे माननीय मित्र डॉ. अम्बेडकर द्वारा पेश किये संशोधन पर सुधार के रूप में है। हम सब निश्चित रूप से यह चाहते हैं कि नियुक्तियों के विषय में आयोग को स्वतन्त्र अधिकार हो और जो कुछ अनुच्छेद में दिया हुआ है मैं तो उससे भी आगे बढ़ना चाहूंगा। अनुच्छेद 286 के खण्ड (3) के परन्तुक में यह कहा गया है:

> "परन्तु अखिल भारतीय सेवाओं के बारे में तथा संघकार्यों से संसक्त अन्य सेवाओं और पदों के बारे में भी राष्ट्रपति तथा राज्य के कार्यों से संसक्त अन्य सेवाओं और पदों के बारे में यथास्थिति राज्यपाल या शासक, उन विषयों का उल्लेख करने वाले विनियम बना सकेगा, जिनमें साधारणतया अथवा किसी विशेष वर्ग के मामले में, अथवा किन्हीं विशेष परिस्थतियों में, लोक-सेवा आयोग से परामर्श किया जाना आवश्यक न होगा।"

अत: इस खण्ड के अधीन राष्ट्रपति अथवा शासक राज्यपाल लोक-सेवा आयोग से किसी विषय में परामर्श न करें और ऐसे नियम बनायें जो लोक-सेवा आयोग के कृत्यों के विरुद्ध हों।

यद्यपि इसके लिये उपबन्ध करने वाला एक अनुच्छेद है, पर यह बहुत आवश्यक है कि संसद इस बात से परिचित हो जाये कि लोक-सेवा आयोग किस प्रकार प्रकार्य कर रहा है, सरकार द्वारा कोई हस्तक्षेप तो नहीं हुआ है। आज कल हम सुनते हैं कि लोक-सेवा आयोग के कामों में कार्यपालिका जहां यह चाहती है कि उसके आदमी नियुक्त किये जायें वहां हस्तक्षेप करती है। हम जानते हैं कि आज कल सम्बद्ध मन्त्रालय का एक सदस्य आयोग में बैठता है और कुछ उन उम्मीदवारों के साथ, जो कि वास्तव में सेवा में हैं और अपनी अपनी जगहों पर कार्य कर रहे हैं, और आदमी भी भेजे जाते हैं जो लोक विज्ञापन द्वारा आवेदन पत्र भेजते हैं और जिनको नहीं लिया जाता है। मैं यह नहीं कहता कि यदि वे उन लोगों से अधिक सक्षम तथा अच्छे हैं जिन्होंने लोक विज्ञापन के आधार पर लोक-सेवा आयोग में आवेदन पत्र भेजे हैं। तो भी उनको अधिमान न किया जाये। ये ऐसे

[श्री आर.के. सिधवा]

विषय हैं जिनका हम आज अनुभव कर रहे हैं और यद्यपि मैं इन नये अनुच्छेदों द्वारा वर्तमान प्रणाली में जो सुधार हुआ है उसकी प्रशंसा करता हूं, पर फिर भी मैं यह समझता हूं कि किसी प्रकार की भी प्रशासन सम्बन्धी नियोग्यता से आयोग को शृंखलाबद्ध न किया जाये। आयोग को इस बात की स्वतन्त्रता होनी चाहिये कि वह जो कुछ उचित समझे उसे विनिश्चय करे। पर संसद की ऐसी स्थिति होनी चाहिये कि वह इस बात का निर्णय कर सके कि आया लोक-सेवा आयोग ने विषयों का विनिश्चय स्वतन्त्र, न्याययुक्त तथा निष्पक्ष होकर किया है, और इस दृष्टिकोण से राष्ट्रपति, शासक अथवा राज्यपाल द्वारा कोई हस्तक्षेप नहीं होना चाहिये जिसका अर्थ है कार्यपालिका द्वारा हस्तक्षेप क्योंकि उनको मन्त्रियों द्वारा दी गई मन्त्रणा के अनुसार कार्य करना पड़ता है। अनुभव यह सिद्ध करता है कि नियुक्तियों के इस महत्वपूर्ण विषय में कई मामलों में पक्षपात हुआ है। यह कोई नई बात मैं नहीं कह रहा हूं। हमको यह देखना चाहिये कि यह पक्षपात जारी न रहे और इस प्रयोजन के लिये हमें यह ध्यान रखना चाहिये कि आयोग को किसी प्रकार के पक्षपात में पड़ने का कम से कम अवसर दिया जाये। इसी कारण मसौदा-समिति ने इस अनुच्छेद में सुधार किया है, पर मैं यह समझता हूं कि अब भी इस विषय में कुछ कमी है। अतः मेरे संशोधन द्वारा यह प्रयास किया गया है कि जिन मामलों में सरकार और आयोग के विचारों में अन्तर है उनके सम्बन्ध में दोनों पक्षों को सुना जाये।

जो बातें मैंने कहीं हैं उनको विचार में रखते हुए मैं आशा करता हूं कि मसौदा-समिति और विशेषकर डॉ. अम्बेडकर संसद के दोनों पक्षों की बातें जान लेने के हित के कारण मेरे संशोधन पर विचार करेंगे। मैं आशा करता हूं कि मसौदा-समिति मेरे संशोधन पर विचार करेगी।

***सरदार हुकम सिंहः** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (पंचम सप्ताह) के संशोधन संख्या 12 में प्रस्थापित अनुच्छेद 286 के खण्ड (4) के पश्चात् निम्न व्याख्या प्रविष्ट की जाये:

'Explanation.—Backward classes of citizens would mean and include class or classes of citizens backward economically and educationally.

(व्याख्या–पिछड़े वर्ग के नागरिकों का आर्थिक तथा शैक्षिक रूप में पिछड़े हुए वर्ग या वर्गों से अभिप्रेत होगा और ऐसे ही वर्ग उसके अन्तर्गत आयेंगे।)

ये शब्द 'पिछड़े वर्ग' हमारे संविधान के मसौदे में कई उन अनुच्छेदों में आये हैं जिन्हें हम पारित कर चुके हैं। इस अनुच्छेद 286 के खण्ड (4) में यह कहा गया है कि—

"खण्ड (3) की किसी बात से यह अपेक्षा न होगी कि लोक-सेवा आयोग से उस रीति के बारे में परामर्श किया जाये जिससे कि संघ अथवा राज्य के पिछड़े वर्ग के नागरिकों की नियुक्ति की जाती है या उनके लिये पद रक्षित किये जाते हैं।"

मैं इस खण्ड का हृदय से समर्थन करता हूं। यह बड़ा ही कल्याणकारी उपबन्ध है, पर मेरी कठिनाई यह है कि समस्त संविधान में "पिछड़े वर्ग" पर की परिभाषा कहीं भी नहीं की गई है इस पद का कुछ स्थानों में प्रयोग तो किया गया है, पर मेरी तुच्छ सम्मति के अनुसार इससे कोई निश्चित अर्थ प्रकट नहीं होता है। यह इतना शिक्षित तथा अस्पष्ट है कि विभिन्न सरकारें तथा विभिन्न प्राधिकारी इसका भिन्न-भिन्न अर्थ लगा सकते हैं।

अनुच्छेद 10 (3) में यह दिया हुआ है:

"इस अनुच्छेद की किसी बात से राज्य के पिछड़े हुए किसी नागरिक वर्ग के पक्ष में जिनका प्रतिनिधित्व राज्य की राय में राज्याधीन सेवाओं में पर्याप्त नहीं है, नियुक्तियों या पदों के रक्षण के लिये उपबन्ध करने में कोई बाधा न होगी।"

दूसरा पद अनुच्छेद 37 में मिलता है और वहां जिन शब्दों का प्रयोग हुआ है वे और ही हैं। वह इस प्रकार है:

"राज्य जनता के दुर्बलतर विभागों के, विशेष तथा अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिमजातियों के शिक्षा तथा अर्थ सम्बन्धी हितों की विशेष सावधानी से उन्नति करेगा तथा सामाजिक अन्याय तथा सब प्रकारों के शोषण से उनका संरक्षण करेगा।"

अनुच्छेद 303 के अधीन निर्वचन सम्बन्धी खण्डों में अनुसूचित जातियों और आदिमजातियों की परिभाषा की गई है, पर इन पिछड़े वर्गों की कोई परिभाषा नहीं है। यहां "दुर्बलतर विभागों" शब्द का प्रयोग किया गया है। मुझे कुछ कठिनाई प्रतीत होती है कि क्या इन दुर्बलतर विभागों का वही अर्थ है जो पिछड़े वर्गों का है, या जहां तक अनुच्छेद 37 का सम्बन्ध है इनका कुछ और ही अर्थ होगा।

इसके बाद मैं यह बात सभा के ध्यान में लाना चाहता हूं:

"राज्य जनता के दुर्बलतर विभागों के शिक्षा तथा अर्थ सम्बन्धी हितों की विशेष सावधानी से उन्नति करेगा।"

इसके बाद हमने एक और अनुच्छेद 301 पारित किया है। उसमें यह उपबन्ध किया गया है:

"भारत राज्य-क्षेत्र में सामाजिक और शिक्षा की दृष्टि से पिछड़े हुए वर्गों की दशाओं के तथा जिन कठिनाइयों को वे झेल रहे हैं उनके अनुसंधान के लिये राष्ट्रपति, आदेश द्वारा, ऐसे व्यक्तियों को मिलाकर, जैसे वह उचित समझे आयोग बना सकेगा...।"

यहां भी जिस आयोग को नियुक्त किया जायेगा वह सामाजिक और शिक्षा की दृष्टि से पिछड़े हुए वर्गों की दशाओं का अनुसंधान करेगा। यहां "आर्थिक दृष्टि से" शब्द नहीं हैं। यह उपबन्ध नहीं किया गया है कि यह कौन विनिश्चय करेगा कि पिछड़े हुए वर्ग कौन हैं। मैं अपने माननीय मित्र श्री देशमुख की बातों को पुष्ट करता हूं कि इस विशाल देश में ऐसे क्षेत्र हैं और जनता के ऐसे वर्ग हैं जो कि उतने ही पिछड़े हुए हैं जितने अनुसूचित वर्ग पिछड़े हुए हैं और यदि हम उनके हितों की उन्नति के लिये उपबन्ध नहीं करते हैं और अन्य वर्गों के

[सरदार हुकम सिंह]

समाज उन्हें उन्नत नहीं बनाते हैं, जिससे कि वे अन्य सम्प्रदायों से मुकाबला कर सके, तो वे पिछड़े हुये ही बने रहेंगे और देश में समान रूप से उन्नति नहीं होगी। इसीलिये मैंने कल यह निवेदन किया था कि यह बहुत ही आवश्यक है कि हम यहां यह पारिभाषित कर दें कि पिछड़े हुए वर्ग कौन होंगे। कहीं न कहीं इसकी परिभाषा होनी चाहिये। हम यह उपबन्ध कर सकते हैं कि राष्ट्रपति को एक आयोग नियुक्त करने का प्राधिकार होगा जो एक वैसी अनुसूची तैयार करेगा जैसी कि अन्य अनुसूचित जातियों और आदिम-जातियों की सूची है, अथवा एक विशेष न्यायाधिकरण नियुक्त किया जाये या कोई पदाधिकारी नियुक्त किया जाये जो इन नागरिकों की दशाओं का अनुसंधान करे और फिर विनिश्चय करे। और यदि यह नहीं किया जायेगा तो कुछ कठिनाई होगी और किसी प्रदेश में कुछ लोगों को कुछ कठिनाइयां होंगी, सम्भव है कि पिछड़े हुए वर्गों के रूप में उनकी देखभाल न हो सके जबकि किसी अन्य क्षेत्र में उन्हीं परिस्थितियों में से लोगों को लाभ हो और उनकी प्रगति की देखभाल हो। इस व्याख्या द्वारा मैंने कुछ परिभाषा देने की कोशिश की है। यह परिभाषा न तो पूर्ण है और न व्यापक है; इसमें यह नहीं कहा गया है कि पिछड़े हुए वर्ग कौन हैं पर इसमें केवल यही संकेत किया गया है कि पिछड़े हुए वर्गों में उन वर्गों को भी शामिल कर लिया जाये जो आर्थिक तथा शैक्षणिक रूप से पिछड़े हुए हैं।

मैंने जानबूझ कर "सामाजिक रूप में" शब्दों को प्रविष्ट नहीं किया है क्योंकि मैंने सोचा कि बहुत से वर्ग जो सामाजिक रूप में पिछड़े हुए हैं उनको अनुसूचित जातियों और आदिमजातियों में शामिल कर लिया जायेगा और यदि कुछ को छोड़ भी दिया जायेगा तो उस अनुसूची में संशोधन कर इस उद्देश्य की पूर्ति की जा सकती है। अतः मेरा उद्देश्य यह है कि यहां यह स्पष्ट कर दिया जाये कि पिछड़े हुए वर्गों का आशय उन सब लोगों से है, उन सब वर्गों से है जो पीछे छोड़ दिये गये हैं और सम्प्रदाय के अन्य विभागों के समक्ष नहीं है क्योंकि इस विषय में वे आर्थिक तथा शैक्षणिक रूप में पिछड़े हुए हैं। मैं अपने माननीय मित्र डॉ. अम्बेडकर से निवेदन करता हूं कि वे मेरी इस कठिनाई को दूर करें कि क्या इस संविधान में कहीं पर इस बात की परिभाषा दी जाये कि "पिछड़े हुए वर्ग" कौन हैं क्योंकि इस पद का कई स्थानों में प्रयोग किया गया है।

***श्री लक्ष्मीनारायण साहू** (उड़ीसा: जनरल): सभापति जी, मेरा संशोधन यह है:

"That in amendment No. 14 of List I (Fifth Week) of Amendments to Amendments for the proposed clause (3) of article 286, the following be substituted:

"(3) The Union Public Service Commission with regard to All India Services and also in regard to other services and posts in connection with the affairs of the Union, and the State Public Service Commission in regard to the State Services and also in regard to the services and

posts in connection with affairs and the State shall be consulted in respect of all appointments, transfers and disciplinary matter relating to these Services."

यह संशोधन देने का मेरा मतलब यह है कि जब तक पब्लिक सर्विस कमीशन को खुद मजबूत न किया जाये तब तक हम लोगों का प्रान्त का शासन या राष्ट्र का शासन ठीक तौर से नहीं हो सकता। मैं जानता हूं कि एक डायरेक्टर ऑफ पब्लिक इन्स्ट्रक्शन के कोई इन्स्पेक्टर ऑफ स्कूल के ट्रान्सफर के मामले में मिनिस्टरी और प्राइम मिनिस्टर नाराज़ हो गये और फिर उन्होंने डी.पी.आई. को जोर देकर कहा कि उन लोगों को वापिस लौटाया जाये। इस बारे में ऐसा हुआ कि डी.पी.आई. को खुल्लमखुल्ला बुलाया था, इस बात में आप लोगों का कुछ हाथ न होना चाहिये और आखिर में वह डी.पी.आई. रिज़ाइन करके चले गये।

और एक बात में मैंने देखा कि एक सिविल सर्विस का आदमी जो प्रान्त में ठीक तरह से काम करता था, उस समय उस को हटाने के लिये कोशिश की गई। उस समय उस प्रान्त के आदमियों ने कोशिश की और गवर्नर साहिब को टेलीग्राम किया कि यह बात बुरी होगी कि उसका ट्रान्सफर किया जाये, तो दो महीने के लिये उसका ट्रान्सफर बन्द कर दिया गया, फिर उसके बाद उसको हरा दिया गया, तो ऐसी हालत में मैं कैसे कहूं कि पब्लिक सर्विस कमीशन को खूब मजबूत करना है और ऐसा मजबूत करना है जिसमें ऐसी गड़बड़ी न हो सके। डॉक्टर देशमुख इसमें थोड़ा नाखुश हो गये वह चाहते हैं कि उन लोगों के लिये ऐसा प्रबन्ध कर देंगे कि जिसमें पब्लिक सर्विस कमीशन का हाथ इतना जोरदार न हो। इससे ज्यादा और क्या हो सकता है। मैं तो यह चाहता हूं कि यह सब कान्स्टीट्यूशन बनाते हैं, उसमें यह शामिल न होना चाहिये। यह तो रूल्स के फायदे हो गये। इसलिये जो असली अमेण्डमेण्ट हैं, उसे पेश किया जाये उनको छोटा करके यहां रख दिया है। इसके बारे में मैं एक बात और कहना चाहता हूं कि जब तक पब्लिक सर्विस कमीशन खूब मजबूत न होगा तब तक सेलेक्शन ऑफ कैण्डीडेट के लिये बराबर खराबी आती रहेगी। हम लोग देखते हैं कि रेलवे में कैसा सेलेक्टशन होता है, उसमें सब जगह दिक्कतें रहती हैं, और सब आदमी उसको नापसन्द करते हैं। मैं इसके बारे में ज्यादा नहीं कहना चाहता हूं। मैं इतना कहकर यह अमेण्डमेण्ट पेश करता हूं।

(संशोधन 18 और 73 पेश नहीं किये गये)

***अध्यक्ष:** मैं समझता हूं कि संशोधन इतने ही हैं। अब अनुच्छेद और संशोधनों पर वाद-विवाद हो सकता है।

***श्री एच.वी. कामत** (मध्यप्रान्त और बरार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, इस अनुच्छेद के मूल मसौदे में जो परिवर्तन किये गये हैं उन पर मैंने ध्यान दिया और मुझे सन्तोष हुआ है मैं विशेषकर अनुच्छेद 286 के खण्ड (5) में किये गये परिवर्तन तथा अनुच्छेद 288-क में किये गये परिवर्तन की ओर विशेषकर संकेत करना चाहता हूं।

फिर भी यह जो परिवर्तन किये गये हैं। उनके सम्बन्ध में कुछ विचार मेरे मन में उठते हैं—मैं सभा का ध्यान मूल अनुच्छेद के खण्ड (4) की ओर आकर्षित

[श्री एच.वी. कामत]

करता हूं—"इस अनुच्छेद की कोई बात इसके लिये अपेक्षा न करेगी कि, संघ अथवा किसी राज्य के भिन्न-भिन्न सम्प्रदायों में नियुक्तियों और पदों का विभाजन किस रीति के अनुसार किया जाये, इसके बारे में लोक सेवा आयोग से परामर्श किया जायें"। इसमें उचित तथा बुद्धिमत्ता पूर्ण रूपभेद कर दिया गया है और भिन्न-भिन्न सम्प्रदायों का उल्लेख नहीं है केवल पिछड़े हुए वर्गों का ही है। मुझे खेद है कि मेरे माननीय मित्र डॉ. देशमुख ने जिस प्रस्थापना को प्रतिपादित किया है मैं उससे सहमत नहीं हो सकता हूं। यद्यपि जिस साधारण विचार शैली को उन्होंने व्यक्त किया है उसे सहानुभूति न रखना तो कठिन है पर मैं समझता हूं कि संविधानिक रूप से जहां तक उस प्रस्थापना को इस अनुच्छेद में रखने का विषय है उसमें कठिनाई है। सभा को स्मरण होगा और मुझे विश्वास है कि डॉ. देशमुख को यह भली भांति विदित है कि मूल अधिकारों के अध्याय में इस सभा ने बहुत पहले ही अनुच्छेद 10 स्वीकार कर लिया है जिसमें यह व्यवस्था की कई है कि सर्वप्रथम राज्य के अधीन नियुक्तियों के विषय में समस्त नागरिकों के लिये अवसर समता होगी और फिर कोई भी नागरिक धर्म, प्रजाति, जाति, लिंग, उद्भव, जन्म स्थान अथवा इनमें से किसी के आधार पर राज्य के अधीन किसी पद के लिये कुपात्र नहीं होगा। इस उपबन्ध के प्रति केवल यही अपवाद है जिसे हम अभी पारित कर चुके हैं। "इस अनुच्छेद की किसी बात के राज्य को.... बाधा न होगी।"

***डॉ. पी.एस. देशमुखः** जिस बात का मैंने सुझाव दिया है वह इन मूलाधिकारों की पूर्ति के लिये ठीक होगी। वह किसी रूप में भी विरोधात्मक नहीं है।

***श्री एच.वी. कामतः** मुझे खेद है कि डॉ. देशमुख ने, जो कुछ मैं कहना चाहता था उसको पूरा नहीं सुना और इस विषय पर मेरी बात समाप्त होने के पूर्व ही उन्होंने हस्तक्षेप करना पसन्द किया। मैं अनुच्छेद 10 के खण्ड (3) की ओर संकेत कर रहा था जिसमें यह निर्धारित किया गया है कि इस अनुच्छेद की किसी बात से पिछड़े हुए किसी नागरिक वर्ग के पक्ष में, न कि किसी सम्प्रदाय के पक्ष में, नियुक्तियां तथा पदों के आरक्षण के लिये प्रावधान करने में राज्य को कोई बाधा न होगी। अनुच्छेद 10 के इस खण्ड (3) में जिस वर्ग का स्पष्ट उल्लेख किया है, और जो कि प्रतिपादित सामान्य नियम का अपवाद है, वह नागरिकों का कोई भी पिछड़ा हुआ वर्ग है। अब यदि डॉ. देशमुख केवल इन्हीं पिछड़े हुए नागरिक वर्गों को ही शामिल करने के प्रयत्न के विरोध में हैं—मैं तो उनमें से हूं जो इस "पिछड़े हुए वर्ग" पद से घृणा करते हैं, यह एक कलंक का अर्थ प्रतिपादित करता है और आशा करता हूं कि शीघ्र से शीघ्र हम देश में इससे मुक्त हो जायेंगे; मैं आशा करता हूं कि वह समय दूर नहीं है जबकि हमारे देश में कोई भी वर्ग पिछड़ा हुआ वर्ग नहीं कहा जायेगा।

***डॉ. पी.एस. देशमुखः** यह केवल कथन ही कथन है।

श्री एच.वी. कामतः मुझे पूर्ण आशा है कि समस्त नागरिक या तो समान रूप से पिछड़े हुए होंगे या समान रूप से उन्नत होंगे और नागरिकों का ऐसा कोई विशेष वर्ग नहीं होगा जिसे पिछड़ा हुआ कहा जा सके।

चौधरी रणबीर सिंहः इस समय तो ऐसा नहीं है।

श्री एच.वी. कामतः मैं भविष्य के लिये कह रहा हूं। मैं आशा करूंगा कि चौधरी रनबीर सिंह धैर्यपूर्वक मेरी बात सुन लें और जब समय हो तब वे अपनी बात कहें। बाधाओं की मैं परवाह नहीं करता हूं, पर मैं आशा करता हूं कि पहले वे मेरी बात सुन लें और फिर किसी प्रकार की बाधा डालें।

अब डॉ. देशमुख यह सुझाव देते हैं कि इस अनुच्छेद 286 में उनके संशोधन संख्या 86 का समावेश करें और यह बढ़ायें "संघ अथवा राज्य की सेवाओं में सब वर्गों का उचित और ठीक प्रतिनिधित्व करने के प्रयोजन से" और उनके संशोधन संख्या 88 का समावेश करें और यह बढ़ायें "इस अनुच्छेद के खण्ड (3) में दी हुई कोई बात लोक-सेवा आयोग से उस रीति के सम्बन्ध में परामर्श करने के लिये अपेक्षित नहीं होगी जिसके अनुसार संघ अथवा किसी राज्य में विभिन्न वर्गों का संख्या के अनुसार प्रतिनिधित्व देने के प्रयोजन से नियुक्तियां की जाती हैं तथा पद रक्षित रखे जाते हैं"। दुर्भाग्य से सभा यदि इस उपबन्ध को स्वीकार कर लेती है, तो यह सभा ने अनुच्छेद 10 में केवल पिछड़े हुए वर्ग के आरक्षण के लिये जो उपबन्ध किया है, उसके विरुद्ध होगा। मेरी इच्छा था कि अनुच्छेद 10 एक भिन्न रूप में स्वीकार किया जाता, पर जिस रूप में अनुच्छेद 10 है उस रूप में उसे स्वीकार कर लेने पर तो इस बात के लिये अब बहुत विलम्ब हो गया जब तक उसका पुनरीक्षण इस प्रकार का उपबन्ध करते हुए नहीं किया जाता कि सर्वप्रथम सब वर्गों को प्रतिनिधित्व दिया जाये तब तक वह अनुच्छेद 10 (1), (2) और (3) के विरोध में होगा जिनको हम स्वीकार कर चुके हैं। मैं तो इन लोगों को जो वास्तव में पिछड़े हुए हैं इस सक्रान्ति काल में पासंग देने तक का विरोध नहीं करूंगा, पर इस अनुच्छेद में इस प्रकार को कोई संविधानिक उपबन्ध उस अनुच्छेद के विरुद्ध होगा जिसे हम स्वीकार कर चुके हैं। उसे सुरक्षापूर्वक संसद के विनियमन पर छोड़ा जा सकता है। मुझे विश्वास है कि इस देश की भावी संसद सब सम्प्रदायों के साथ उचित तथा ठीक व्यवहार करेगी और इस सम्बन्ध में इस विषय के उपबन्ध बनाने का कार्य भावी संसद पर छोड़ने में कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिये।

मैं यह कहना चाहूंगा कि डॉ. अम्बेडकर ने इन अनुच्छेदों के जिस मसौदे को सभा में प्रस्तुत किया है वह मेरे विचार से किसी विधि ग्रन्थ के वृहदाकार अध्याय के समान वृहदाकार है। संविधान सम्बन्धी प्रलेख में इतने बड़े-बड़े अनुच्छेद नहीं होते हैं, आज प्रातःकाल मुझे कोई संविधान की एक प्रति मिली जो कि पश्चिमी जर्मनी का 1940 में स्वीकार किया गया अन्तिम संविधान है और यह एक छोटी सी पुस्तिका है जिसमें 52 पृष्ठ हैं और 146 अनुच्छेद। इसकी तुलना में हमारा संविधान तिगुना है और शायद चोगुना हो—और ऐसे शब्दाडम्बर से भरा पड़ा है कि जिसका अंधिकांश आसानी से छोड़ा जा सकता था। उदाहरणार्थ इस 288 अनुच्छेद में शब्दाडम्बर की इतनी अधिक भरमार है कि यह केवल ईश्वर की जानता है कि वह क्योंकर है। क्या हम यह नहीं कह सकते थे कि "लोक-सेवा आयोग द्वारा की गई समस्त सिफारिशों या प्रस्थापनाओं को अमल में आया जायेगा सिवाय राष्ट्रपति या राज्यपाल द्वारा दिये गये कारणों के? हमारे प्रयोजन के लिये केवल यह एक वाक्य पर्याप्त था।

[श्री एच.वी. कामत]

ये सब शब्दाडम्बर न्यायवादियों का बुद्धिवाद प्रकट करते हैं जिनका अधिकांश जीवन तर्क करने और न्यायालयों में परस्पर एक दूसरे के प्रति शब्दों का आदान प्रदान करने में बीता है और यह उस जनता की भावना को, उस जनता की संघर्षयुक्त भावना को प्रकट नहीं करते हैं जो स्वतन्त्रता संघर्ष के दहकते हुए अंगारों पर चली है और जो जीवन प्रकाश से अपने संविधान को अनुप्राणित करने के लिये के लिये यहां एकत्रित हुई है। दुर्भाग्यवश मसौदा-समिति में उन व्यक्तियों का प्रधान्य है जिनका जीवन सुरक्षित रहा है, जिन्हें अमर आर्दश की प्रकाशमय ज्योति ने स्पर्श तक नहीं किया है और जिन्होंने अपना अधिकांश जीवन सरकारी सेवा में बिताया है। उनके लिये कदाचित एक ऐसे प्रलेख की रचना करना कठिन है जो मेरे विचार के अनुसार कोई विधि ग्रन्थ न हो, वरन् एक समाज सम्बन्धी राजनैतिक प्रलेख हो—जो एक स्पन्दनशील, रोमांचकारी तथा उत्साहवर्द्धक प्रलेख हो। पर यह हमारा दुर्भाग्य है कि ऐसा नहीं हुआ और हम पर शब्दों ही शब्दों का अपार भार लाद दिया गया है जिसको सरलता से हल्का किया जा सकता था।

एक और बात है और वह यह है कि खण्ड (3) में यह अपेक्षित है—वह ठीक भी है कि खण्ड (3) के अधीन राष्ट्रपति अथवा राज्यपाल द्वरा निर्मित सब विनियमों को संसद् के समक्ष रखा जायेगा। इस सम्बन्ध में मैं सभा को उस बात की याद दिलाऊंगा, जिसको एक और सम्बन्ध में मसौदा समिति लागू करने में असमर्थ रही। यह अनुच्छेद 280 के सम्बन्ध में हुआ, जिसमें यह उपबन्ध किया गया है कि राष्ट्रपति द्वारा निर्मित विनियम, और आज्ञप्ति संसद के समक्ष रखे आयेंगे, पर यह जो अनुच्छेद पारित किया गया था, उसमें इस खण्ड (3) के इस मुख्य भाग को नहीं रखा गया कि वे उन रूपभेदों के अधीन, जो जैसे संसद उचित समझे वैसे चाहे निसन के रूप में हों, चाहे संशोधन के रूप में होंगे। इस खण्ड की तुलना में वह अधिक महत्वपूर्ण विषय है, क्योंकि यह निश्चय है कि उससे इस देश के लाखों नर नारियों के स्वातन्त्र्य और जीवन पर प्रभाव पड़ेगा। इसका सम्बन्ध तो सेवा में के कुछ हजार व्यक्तियों से ही है। यह मसौदा समिति की उस विचारधारा का दिग्दर्शन कराती है कि कुछ सहस्र सेवकों के अधिकारों की तुलना में लाखों नरनारियों का जीवन और स्वास्थ्य तुच्छ है। लाखों व्यक्तियों के मूलाधिकार सम्बन्धी विनियम निरसन अथवा परिवर्तन के लिये संसद समक्ष नहीं आते हैं, पर लोक सेवाओं सम्बन्धी नियम उसके समक्ष आते हैं। इस वस्तुस्थिति पर मुझे खेद है।

और मैं यह भी समझता हूं कि इस अनुच्छेद के खण्ड (4) के विषय के सम्बन्ध में पिछड़े हुए नागरिकों के लिये नियुक्तियों और पद आरक्षित करने के लिये लोक-सेवा आयोग से परामर्श किया जाये। यद्यपि मुझे यह ठीक विदित नहीं है कि इन वर्गों के लिये सेवाओं में कोई प्रासंग होगा या नहीं और यदि है तो अच्छी बात है, पर यदि किसी आधार पर, चाहे वह जनसंख्या का आधार हो या अन्य कोई आधार, किसी विशिष्ट वर्ग के लिये पद आरक्षित किये जाते हैं, तो पहिले संख्या नियत कर ली जाती है—कि इतना इस वर्ग के लिये और इतना उस वर्ग के लिये इत्यादि इत्यादि।

अब श्रीमान, मान लीजिये कि राष्ट्रपति के मन में यह बात हो कि इतने पद नाम निर्देश द्वारा भरे जायें। नाम निर्देश के लिये कोई अनुपात होना चाहिये, जैसा

कि पहले आई.सी.एस. के विषय में हुआ करता था कि इतने पदों को नामनिर्देश द्वारा पूर्त्त किया जायेगा और इतने पदों को खुली प्रतियोगिता द्वारा। यहां भी राष्ट्रपति को यह विनिश्चय करना पड़ेगा कि किस अनुपात में नामनिर्देशन द्वारा भर्ती की जायेगी और किस अनुपात में खुली प्रतियोगिता द्वारा जब तक यह संख्या निश्चित नहीं की जाती है, तब तक राष्ट्रपति के लिये नामनिर्देशन और प्रतियोगिता की संख्याओं को अन्तिम रूप में नियत करना कठिन होगा। अतः इस सम्बन्ध में उसे लोक-सेवा आयोग से परामर्श करना होगा और यदि जो पद आरक्षित रखे जाते हैं, उनकी संख्या के सम्बन्ध में राष्ट्रपति आयोग से परमर्श करता है, तो उसकी प्रतिष्ठा के लिये यह कोई अपमानजनक बात नहीं है। अपने संविधान में इस आयोग को जो महत्व हमने दिया है, उस पर विचार करते हुए यह अच्छा होता कि अनुच्छेद 286 के खण्ड (3) में उल्लिखित विषयों के साथ साथ इस विषय के बारे में भी आयोग से परामर्श किया जाता।

इसके बाद अन्त में 288-क में प्रस्तुत किये गये प्रश्नों पर मैं कुछ शब्द कहूंगा। श्रीमान, यद्यपि संविधान अभी प्रवर्तन में नहीं आया है—और मैं यह नहीं जानता हूं कि कब यह प्रवर्तन में आयेगा—पर हमारे समक्ष प्रस्तुत यह अनुच्छेद यदि आज सभा द्वारा पारित कर लिया जाता है, तो भविष्य में इस संविधान के प्रवर्तन में आने के पूर्व ही, इस संविधान के आगामी जनवरी या फरवरी में लागू होने से पूर्व ही, यहां तक कि संक्रान्ति काल में ही मैं आशा करता हूं कि इसके अनुसार नियुक्तियां की जायेंगी, यहां लोक सेवा आयोग की ओर अन्यत्र अन्य आयोगों की सिफारिशों को सरकार द्वारा इतना महत्व दिया जायेगा और उन पर इतना विचार किया जायेगा, जितने के वे योग्य हैं और पर्याप्त कारण बताये बिना उनको रद्द नहीं किया जायेगा, उनकी उपेक्षा नहीं की जायेगी या उनका निरादर नहीं किया जायेगा। मेरे विचार से मेरे मित्र श्री सिधवा या शायद श्री नज़ीरुद्दीन अहमद ने यह बताया है कि कई बार फेडरल लोक सेवा आयोग की सिफारिशों और प्रस्थापनाओं की उपेक्षा तथा निरादर किया गया है। मैं भी यह मानता हूं और यहां तक कि उच्च पदाधिकारियों ने मुझसे कहा है, भारतीय सरकार के पदाधिकारियों तक ने मुझसे कहा है कि इन सिफारिशों के प्रति अपेक्षा के कारण, आयोगों द्वारा की गई सिफारिशों के प्रति सरकार की ओर से इस प्रकार के क्रूर व्यवहार के कारण ये आयोग ही निन्दनीय होते जाते हैं। यह किसी गैर सरकारी या किसी साधारण व्यक्ति द्वारा दिया प्रमाण नहीं है, बल्कि यह मैंने भारतीय सरकार के अधीन कुछ उच्च अधिकारियों से सुना है। आयोग सिफारिश करते हैं, मन्त्री उन सिफारिशों पर हाथ पर हाथ धर कर बैठ जाते हैं और स्वयं नियुक्त कर लेते हैं। इसी कारण मैं सभा को यह चेतावनी देता हूं कि इन आयोगों का जितना सम्मान होना चाहिये उतना नहीं है। और दूसरी बात यह है कि इसके कारण मन्त्रालयों में कुलपोषणता और पक्षपात हो रहा है। कुछ मन्त्री उच्च कोटि के कुलपोषक बन गये हैं। इस प्रकार की बातों का अन्त करना चाहिये। अन्यथा इसके कारण सेवाओं, में भ्रष्टाचारण उत्पन्न होगा, क्योंकि सेवा में के लोग समझने लगेंगे कि "हमारी योग्यता, हमारी सच्चाई और हमारी दक्षता किसी काम की नहीं, उनका कुछ भी मूल्य नहीं, जब तक कि हम महान व्यक्ति न हों, जब तक कि मन्त्री पर हमारा आवश्यक प्रभाव न हो, जब तक कि हम मंत्री के कृपापात्र न हों"। यदि ये विचार होंगे तो इस देश का दुर्भाग्य ही है जबकि सेवा में के व्यक्तियों की इस प्रकार की विचार धारा है और जब वे इस प्रकार की विचारधारा से प्रभावित हैं।

[श्री एच.वी. कामत]

अन्त में जैसा कि मैं कह चुका हूं, मसौदा समिति की दृष्टि पर परदा पड़ा हुआ है और उनका निर्णय केवल विधि सम्बन्धी विचारधारा के चक्कर में फंसा हुआ है, पर फिर भी उसने एक ऐसा अनुच्छेद प्रस्तुत किया, जिसमें यद्यपि शब्द बाहुल्य अधिक है, पर मैं समझता हूं कि वह है पुष्ट। मैं आशा करता हूं कि हमारी सरकार और हमारे राज्य का अनुच्छेद के शब्दों का ही नहीं, वरन् उसके भाव का भी सम्मान करेंगे, जिसका आज बड़ा ही दुःखद अभाव है।

***श्री फूल सिंह** (संयुक्त प्रान्तः जनरल): अध्यक्ष महोदय, डॉ. देशमुख द्वारा पेश किये गये दोनों संशोधनों का हृदय से समर्थन करने के लिये मैं खड़ा होता हूं। दूसरा दृष्टिकोण जो सभा में व्यक्त किया गया है, वह लोक सेवा आयोग को और भी अधिक शक्तियां देने के लिये है और विरोधियों का यह विचार है कि भरती की कसौटियां दक्षता और योग्यता ही होनी चाहिये। यह उन लोगों के लिये, जिनको अन्ततः इन पदों पर नियुक्त किया जायेगा, कुछ रोटी के टुकड़ों की लड़ाई नहीं है। स्वशासन का अर्थ है लोक-राज्य, और यदि विधानमण्डलों में अच्छी विधि बनाने के लिये श्रमिक वर्ग के व्यक्ति होंगे, तो इन अच्छी विधियों को समुचित रूप में क्रियान्वित करना सेवा में के व्यक्तियों पर निर्भर है और इस कारण उनका महत्व है। इस विषय में योग्यता को बहुत बढ़ा चढ़ा दिया हैः पर समान योग्यता में समान अवसर का भाव पहले से ही निहित है, और मेरे विचार से यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि श्रमिक वर्ग को ऐसे समस्त अवसरों से वंचित रखा जाता है, जिसका उपभोग चन्द पढ़े लिखे शहरों में रहने वाले व्यक्ति करते हैं। ग्राम निवासियों से नगरनिवासियों का मुकाबला करने को कहना उसी प्रकार का है, जिस प्रकार कि साइकिल वाले से मोटर साइकिल वाले का मुकाबला करने के लिये कहना, जो कि स्वयं ही मूर्खतापूर्ण है। श्री त्यागी ने यह कहकर डॉ. देशमुख के भाषण में हस्तक्षेप किया था कि यह निरक्षरों के लिये लड़ाई है। मैं समझता हूं कि वह बात चाहे कितनी ही उपालम्भयुक्त हो, पर कदाचित उन्होंने ठीक ही कहा था।

स्वशासन का अर्थ है लोक-राज्य और यदि लोक निरक्षर है, तो चन्द नेताओं को अपने लिये समस्त शक्तियों को हड़प लेने का कोई अधिकार नहीं है। यह नारा—योग्यता और औचित्य की यह पुकार उन लोगों द्वारा की जाती है, जो लाभदायक स्थिति में हैं और यदि अन्य लोग आ जायें तो उनकी हानि होती है।

श्रीमान, मैं ऐसे अनेक दुष्टान्त उद्धृत कर सकता हूं, जिनमें उन लोगों द्वारा गड़बड़ी की गई है, जो दक्ष होने का पूरा दावा करते हैं। एक उदाहरण यह है। संयुक्त प्रान्त की सरकार ने यह विधि निर्मित की कि छोटे-छोटे ज़मींदार बिना न्यायालय की अनुमति के अपनी भूमि औरों के नाम न करें। अब यह बात न्यायालय पर निर्भर करती थी। यदि दण्डाधिकारी किसी गरीब परिवार से आया हुआ है, तो वह सच्चाई से कार्य करेगा और परिवर्तन न करने देगा। पर उन लोगों के मामलों में जो स्वयं या तो साहूकार हैं या बड़े-बड़े पूंजीवादी हैं या जिनका जनता से कोई सम्बन्ध नहीं है, उनके लिये केवल कुछ और रुपयों के खर्च की बात थी, जो पेशकार को दे दिये जाते हैं। मैं एक और उदाहरण दे सकता हूं। संयुक्त प्रान्त में अभी अभी पिछले वर्ष एक बहुत बड़े सरकारी पदाधिकारी ने उस समय

नहर रुकवा दी, जबकि फसल पकने पर आ रही थी। इसके कारण लाखों मन अच्छे चावल की कमी हुई। यह होता है कि जबकि आप उन लोगों को नियुक्त करते हैं, जो प्रतियोगिता में सफल हो जाते हैं, पर जो अपने काम में कोई रुचि नहीं रखते हैं और जो काम उनको सौंपा जाता है, उसके बारे में कुछ भी नहीं जानते हैं। श्रीमान, मैं यह कहता हूं कि दक्षता का सम्बन्ध उस कार्य से भी होना चाहिये, जिसके निर्वहन के लिये वह मनुष्य रखा जाता है।

कुछ वर्ष पहले मैंने यह शिकायत की थी कि पैदा करने वाले को जितनी सामग्रियां बेचनी पड़ती हैं उन सब पर नियंत्रण किया जा रहा है और अनाज के उत्पादन में उनको कोई भी सुविधा नहीं दी जाती है। मैंने ईख के कोल्हुओ का उदाहरण दिया था। युद्ध से पहले यह कोल्हू 20 रुपये में आ जाता था। युद्ध काल में उसका किराया 250 रुपये तक हो गया, जबकि अन्य सब वस्तुओं पर नियंत्रण था। मेरी शिकायत सरकार तक गई और फिर मंत्रालय में आई। इस समय अक्तूबर मास था और इस सभा में उपस्थिति प्रत्येक व्यक्ति यह जानता है कि ईख पेरने का मौसम नवम्बर से पूर्व आरम्भ नहीं होता है। मंत्रालय ने बताया कि ईख के सब कोल्हू दिये जा चुके हैं। जब कोई कोल्हू किराये पर दिये जाने के लिये शेष नहीं है। जब आप ऐसे लोगों को सेवा में रखेंगे, जो अपने काम से परिचित नहीं हैं, सदैव ऐसा ही होगा।

यह प्रतियोगिता का प्रश्न नहीं है। यदि आप देश का संचालन ठीक रूप से करना चाहते हैं, यदि प्रशासन इतने कुशल रूप में हो जितना मेरे मित्र चाहते हैं, तो आपको उस काम पर ऐसे आदमी रखने चाहियें तो काम से परिचित हों और जो जनता में से हों। अन्यथा प्राशासन का सम्पर्क जनता से नहीं हेगा। इसी कारण संसार के लगभग सब देशों में लगातार सेवाओं में नये व्यक्तियों की भरती की जाती है और न्यायाधीश का लड़का अनिवार्यत: न्यायाधीश नहीं होता और यह आवश्यक नहीं है कि डिप्टी कलक्टर का लड़का डिप्टी कलक्टर हो। यह प्रथा होनी चाहिये कि जो लोग बहुत दिनों से सेवाओं में रहे हैं, उनसे गांवों में जाने और वहां बसने के लिये कहना चाहिये और गांवों की जनता को प्रशासन संचालन के लिये आमन्त्रित करना चाहिये, क्योंकि जनता की कठिनाइयों को केवल वे ही समझते हैं। वे ही जनता के दुख-दर्द को समझ सकते हैं और वे ही उनकी भावनाओं का निर्वचन कर सकते हैं।

डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रेषित खण्डों की ओर निर्देश करने की यदि मुझे अनुमति है, तो मैं यह कहूंगा कि समस्त शक्तियां लोक सेवा आयोग को देते हैं और इस विषय में वे सरकार को व्यर्थ कर देते हैं। मैं नहीं जानता हूं कि उन चन्द लोगों की तुलना में, जिनका समस्त देश द्वारा चुनाव होता है और जिनका इतिहास सेवा से भरा पड़ा है, उन लोगों में क्या अन्तर है जिनकी नियुक्ति सरकार के सर्वोच्च पदाधिकारी द्वारा की जाती है। यदि प्रधान मन्त्री गलती कर सकते हैं, तो मैं समझता हूं कि लोक सेवा-आयोग उससे भी बड़ी गलती कर सकता है। मैं ऐसे अनेक दृष्टान्त दे सकता हूं, जिसमें लोक सेवा-आयोग ने गलती की है और उसकी सच्चाई पर शंका हो सकती है। यदि समस्त देश पर विश्वास नहीं किया जा सकता, यदि किसी व्यक्ति की सेवा का समूचा इतिहास नियुक्तियां करने के लिये उसे प्राधिकृत करने हेतु पर्याप्त नहीं है, तो मुझे विश्वास है कि लोक सेवा आयोग के कुछ व्यक्तियों द्वारा की गई नियुक्तियां भी इस उद्देश्य की पूर्ति नहीं करेंगी। इन शब्दों

[श्री फूल सिंह]

के साथ डॉ. देशमुख द्वारा पेश किये गये संशोधन का मैं समर्थन करता हूं।

श्री काका भगवन्त राय (पटियाला, ईस्ट पंजाब स्टेट्स यूनियन): सदर साहब, मैं अपने दोस्त साहू साहब की तरमीम की ताईद करने के लिये आया हूं। जब कि यूनियन और स्टेट्स में पब्लिक सर्विस कमीशन बन जायेंगे, तो यह मेरी समझ में नहीं आता कि बहुत सी आसामियां जो पुर करने वाली होंगी वह उनके हाथों में नहीं रखी जायेंगी। अक्सर यह देखने में आया है कि जो आसामियां नामीनेशन के जरिये पुर की जाने वाली हैं, वह काबलियत की बिना पर नहीं होती है। मुझे तो हिन्दुस्तान रियासतों का तजुरबा है, वहां पर जो आसामियां पुर की जाती हैं, वह या तो रिश्तेदारों को या दोस्तों को या उनको जो कि हुकूमत की खुशामद करते हों, दी जाती हैं। इसलिये मुझे डर है कि कहीं यहां पर भी ऐसा ही ना हो जाये। अभी अभी सुना है और यह दो तीन महीने की बात है कि आई.ए.एस. में कुछ आसामियां पुर करनी थीं, उसके लिये एक बोर्ड बनाया गया, मगर बहुत सी ऐसी भी आसामियां भरती कर दी गई, जो बोर्ड के दायरे से बाहर थीं। और ऐसा करने के लिये यह वजह बताई कई कि ऐसा करना जरूरी था क्योंकि यह आसामियां पुर करने में जल्दी थी। लेकिन बाद में मालूम हुआ कि वह अफसरों के या तो दोस्त थे या उनके रिश्तेदार थे। इसलिये मैं यह कहना चाहता हूं कि आप जो इस किस्म के कमीशन मुकर्रर कर रहे हैं, उनको इतनी ताकत दे रहे हैं, तो ऐसी बातें नहीं होनी चाहिये। जो कुछ आजकल हो रहा है उसी वजह से कांग्रेस और हमारी हुकूमत बदनाम हो रही है। इस वक्त हमारे बहुत से बड़े-बड़े अफसर और बहुत से जिम्मेदार आदमी उन आदमियों की भरती कर रहे हैं जो कि काबिल नहीं हैं। और जो कि मुरतहक नहीं हैं। नतीजा यह हुआ है कि कांग्रेस का इक्तेदार हिन्दुस्तान में और हिन्दुस्तान के बाहर बहुत कम हो रहा है। मैं यह कहूंगा कि आप अगर पब्लिक सर्विस कमीशन को काबिल आदमियों को भरती करने का अख्तियार दे रहे हैं, यह ठीक है, मगर आप अगर उन कमीशनों के अलावा किसी और को भी ऐसी ताकत देंगे, तो वह आपके लिये बहुत खतरनाक होगा। काबिल आदमियों की भरती के लिये यह बेहतर है, लेकिन अगर आप यह ताकत किसी ओर को भी देना चाहें तो दे दें, मगर मैं यह कहूंगा कि यह तरीका बेहतर न होगा। यह जो साहू साहब ने कहा है कि ढाई सौ या पांच सौ की तादाद रखी जाये, इसके लिये मैं कहूंगा कि आप इस उसूल को मान लें और अगर आप इसमें कुछ कमी या ज्यादा करना चाहें तो करें। ऐसा करने से आप उनके हाथ बांध लेंगे और वह मनमानी कार्रवाई नहीं कर सकते हैं।

जहां तक 287 में मिस्टर नज़ीरुद्दीन साहब की तरमीम का सवाल है, मैं उसकी ताईद करता हूं कि अगर पब्लिक सर्विस कमीशन प्राइवेट फर्म्स और कम्पनियों में मदाखलत करेंगे, तो कारवार चलना बन्द हो जायेगा। मेरा ख्याल यह है कि पब्लिक सर्विस कमीशन शायद कारबार की मुश्कलात को नहीं समझ सकेगा और यह नहीं समझ सकते हैं कि किसके क्या रोजाना के काम हैं। उनके दखल देने से कारबार में गड़बड़ हो जायेगा और कारबार में दिक्कत हो जायेगी। इसलिये मैं यह अर्ज करूंगा कि इस तरमीम को मंजूर किया जाये।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद** (बिहार: जनरल): श्रीमान, मसौदा समिति के अध्यक्ष द्वारा पेश किये गये सब अनुच्छेदों के समर्थन के लिये मैं खड़ा होता हूं। समर्थन करते हुए जो उपबन्ध समाविष्ट किये जा रहे हैं, उनके कुछ उन पहलुओं की ओर मैं संकेत करना चाहूंगा, जिनमें मैं पूर्णतया सहमत नहीं हूं।

लोक सेवा आयोगों की शक्तियों का रूप मंत्रणादायक होगा। वे ऐसे निकाय होंगे, जो सम्बद्ध मन्त्रालयों को भारतीय सरकार के और प्रान्तीय सरकार के मन्त्रालयों से सिफारिश करेगा। उनकी सिफारिशें स्वीकार की जायें या न की जायें। मैं यह चाहता हूं कि लोक सेवा आयोगों की शक्तियों का परमादेशत्मक रूप होना चाहिये। नियुक्तियां, पदोन्नति तथा स्थानान्तरण सम्बन्धी समस्त विषयों को पूर्णतया केवल लोक सेवा-आयोगों को सौंप देना चाहिये। इन विषयों से मन्त्रियों का कोई सम्बन्ध नहीं होना चाहिये। यहां मैं केवल प्रान्तीय मन्त्रियों की ही ओर नहीं वरन् केन्द्रीय मन्त्रियों की ओर भी निर्देश कर रहा हूं। इंग्लैण्ड में बिटले परिषदों को ये शक्तियां दी गई हैं। इस सभा के माननीय सदस्यों को मैं यह बताना चाहूंगा कि बिटले आयोग के आधे सदस्यों की नियुक्ति स्वयं सेवकों में से की जाती है। कनाडा, आस्ट्रेलिया और दक्षिण अफ्रीका में तथा समस्त अधिराज्यों में नियुक्तियां, पदोन्नति और स्थानान्तरण पूर्णतया लोक सेवा आयोगों के हाथ में रहते हैं। मैं चाहता हूं कि इसी कार्यप्रणाली को अपने संविधान में रखा जाये।

मैं इस तर्क को नहीं दुहराऊंगा कि नियुक्तियों, पदोन्नतियों और स्थानान्तरणों के सम्बन्ध में प्रान्तीय सरकारों में भ्रष्टाचार, अदक्षता और कुलपोषणता करते चले आये हैं। एक और कारण है कि मैं इसके बारे में इतना उत्सुक क्यों हूं। मैं यह चाहता हूं कि हमारी असैनिक सेवा की नींव किसी दृढ़ आधार पर रखी जाये। प्रश्न केवल यही नहीं है कि जिससे कुछ मुट्ठी भर व्यक्तियों के जीवन पर प्रभाव पड़ता हो, जैंसा कि श्री कामत ने कहा था। वह तो प्रशासन का रीढ़ स्तम्भ है। यदि आपके असैनिक सेवक दक्ष नहीं हैं, यदि वे स्वतन्त्र नहीं हैं, तो सारा का सारा ढांचा बैठ जायेगा। मेरा यह मत है कि भारत का भविष्य संसदीय राजनीतिज्ञों के हाथ में नहीं है, वरन् असैनिक सेवकों के हाथ में है। मेरा यह मत है कि लोक सेवा-आयोग की स्वतन्त्रता की रक्षा करने के लिये यह सिद्धान्त रखना चाहिये कि किसी राजनीतिक पक्ष के व्यक्ति को लोक सेवाओं में भरती नहीं किया जायेगा। मैं तो एक कदम और आगे बढ़ाना चाहता था और यह सुझाव देना चाहता था कि किसी भी राजनैतिक पक्ष के व्यक्ति को लोक सेवा आयोग का सदस्य न बनने दिया जाये। पर अब तो वे अनच्छेद पारित हो चुके। अत: अब मेरे लिये केवल यह सुझाव देने का ही मार्ग रह गया है कि किसी भी राजनैतिक पक्ष के व्यक्ति को सेवाओं में भरती न होने दिया जाये।

आज स्थिति यह है कि नियुक्ति के पश्चात् सेवाओं पर लोक सेवा-आयोग का कोई नियंत्रण नहीं रहता है। सेवाओं की राजनैतिक अथवा अन्य प्रभावों से रक्षा करने के लिये वे स्वतन्त्र अथवा सक्षम नहीं हैं। मैं यह चाहता हूं कि भारत के भावी लोक सेवा आयोगों की ऐसी स्थिति हो कि वे असैनिक सेवकों की केवल मंत्रियों के प्रभाव से ही नहीं वरन् सब तरह के राजनैतिक प्रभाव से रक्षा कर सकें। एक प्रसिद्ध लेखक ने भारतीय असैनिक सेवा की तुलना प्लेटो के वेदान्ती

[श्री ब्रजेश्वर प्रसाद]

राजाओं से की है। मैं भी चाहता हूं कि हमारे असैनिक सेवक उच्च तथा समझदार व्यक्ति हों। मैं समझता हूं कि केवल नियुक्ति, पदोन्नति और स्थानान्तरण के विषय की ही नहीं वरन् अनुशासन सम्बन्धी समस्त विषयों की शक्ति लोक सेवा-आयोग के हाथ में रहे। मैं यह समझने में असमर्थ हूं कि जिस पद्धति से अधिराज्यों में और इंग्लैण्ड में कोई संघर्ष अथवा प्राधिकार सम्बन्धी अव्यवस्था उत्पन्न नहीं हुई है, उसे हमारे संविधान में क्यों न रखा जाये। जबकि आदर्श सरलता से करतलगत है, तो मैं समझता हूं कि उससे द्वितीय स्थान के आदर्श को पसन्द करना उचित तथा ठीक नहीं है। इस विषय पर मसौदा समिति ने जो मार्ग ठीक समझा था, उसे उसको सभा के समक्ष रखना चाहिये था। यह सभा का कार्य था कि वह समझौता करती। इन खण्डों के मसौदा बनाने में राजनैतिक प्रभाव नहीं पड़ने देना चाहिये था।

इन पर्यवेक्षणों के साथ मैं इन अनुच्छेदों का समर्थन करता हूं।

प्रो. यशवन्त राय (ईस्ट पंजाबः जनरल): पूज्य प्रधान जी, मैं डॉक्टर देशमुख जी ने जो संशोधन पेश किये हैं, उनका समर्थन करने के लिये आया हूं।

दो हजार वर्ष के बाद इस देश के हरिजन महसूस करने लगे थे कि हमें बराबर के अधिकार मिलेंगे। लेकिन बावजूद इस बात के कि सर्विसेज में हमारे लिये 12 फीसदी और 17 फीसदी रिजर्व रखी हैं, फिर भी बेइन्साफी होती है।

डॉ. अम्बेडकर साहब ने बड़ी कोशिशों के साथ कुछ विद्यार्थियों को विलायत भेजा और उन विद्यार्थियों पर सेण्ट्रल गवर्नमेन्ट का काफी से ज्यादा रुपये खर्च हुआ। मेरे पास ऐसी मिसालें हैं जो कि बेइन्साफी को साबित करती हैं। उनमें से एक हरिजन नौजवान जो कि एम.ए.एम.ई.डी. पास करके आये हैं, वह विलायत जाने से पहले 180 रुपये तनख्वाह लेते थे। लेकिन दुख की बात है कि विलायत से लौटने के बाद किसी पब्लिक सर्विस कमीशन ने उनको कोई सर्विस नहीं दी और इस वक्त वह सिर्फ 220 रुपये ले रहे हैं। हालांकि उस अकेले विद्यार्थी पर सेण्ट्रल गवर्नमेण्ट ने चालीस हजार रुपये खर्च किया। ऐसी हालत में मैं यह महसूस किये बगैर नहीं रह सकता कि फैडरल पब्लिक सर्विस कमीशन या दूसरे कमीशन हरिजनों के साथ अन्याय नहीं करेंगे। मैं समझता हूं कि उनके साथ अन्याय अवश्य होगा। हम देखते हैं कि जितनी सबोर्डिनेट सर्विसेज़ हैं, उनके अन्दर यह असूल काम करता है कि चैरिटी बिगिन्स एट होम। जिसका कोई रिश्तेदार होता है, उसकी सिफारिश पहुंच जाती है। यहां तक मैंने देखा है कि मिनिस्टर लोग तक टेलीफोन उठाकर मैम्बरों से कह देते हैं और जिनके लिये वह चाहते हैं, इण्टरव्यूज सीक्योर कर ली जाती हैं। ऐसी दशा में मैं समझता हूं कि यह जो बैकवर्ड कम्युनिटज़ हैं या जो हरिजन हैं, उनके साथ बेइन्साफी होती ही रहेगी। जब तक कि इस क्लाज़ के अन्दर कोई न कोई स्पेशल प्रावीज़न न रखा जायेगा। और मैं तो यह कहता हूं कि जो भी फैडरल पब्लिक सर्विस कमीशन बने या स्टेट्स में और प्राविन्सेज में कमीशन बने, उनमें कोई न कोई हरिजनों का नुमाइन्दा होना चाहिये, ताकि वह उन कैण्डीडेट्स की जो कि एप्लाई करते हैं, देखभाल कर सकें और उनके साथ बेइन्साफी न होने पावे।

हजारों साल के बाद महात्मा गांधी की लीडरशिप के अन्दर और ऋषि दयानन्द की कृपा से इस देश के हरिजनों के अन्दर उत्साह पैदा हुआ था कि वह एजूकेशन में बढ़ें और उनको आशा हुई थी कि सोसायटी के अन्दर जो उनके साथ छूआछूत है, वह हटेगी और उन्हें समान अधिकार मिलेंगे। अगर हम इन चीजों को पूरा करना चाहते हैं और यह चाहते हैं कि ऐसी सोसायटी हो, जिसमें सबको दरजा एक सा हो, तो हमें कांस्टीट्यूशन में ऐसा प्रावीजन रखना पड़ेगा। कामथ साहब ने कहा कि फण्डामेण्टल राइट्स में 10 ए में यह बयान दिया गया है कि ईक्वेल आपारचुलिटीज़ सबको दी जायेंगी, इर्रस्पेक्टिव ऑफ कास्ट क्रीड एण्ड कलर। हम देखते हैं कि अनटचेबिलीटीज़ क्लाज भी पास हो गया है कि छुआछूत दूर की जाये, लेकिन देहातों में इससे कोई फर्क नहीं पड़ा है। अगर आप देखें तो आपको पता चलेग कि देहातों के अन्दर जो इस कान्स्टीट्यूशन को मानने वाले हैं, 85 फीसदी लोग अनपढ़ हैं वह इन बातों को नहीं मानते हैं। इसलिये अगर आप चाहते हैं कि यह जो पिछड़ी हुई कौमें हैं, या जो दबी हुई जातियां हैं, जिनके साथ आप हजारों बरसों से बेइन्साफी करते आये हैं, उनको अगर आप बराबर लाना चाहते हैं और हिन्दुस्तान के अन्दर एकता करना चाहते हैं, ताकि देश ज्यादा तरक्की करे, उन्नति हो और दूसरी पार्टियां जो देश के अन्दर हैं वह गरीबों को मिसलीड न कर सकें, तो मैं यह कहूंगा कि इस कांस्टीट्यूशन में ऐसा प्रावीजन होना चाहिये कि कम से कम जितने पढ़े लिखे हरिजन लोग हैं, उनको तो नौकरी मिलनी चाहिये। मेरे पास ऐसी मिसालें हैं कि जहां पर एक मैट्रिक हाईकास्ट लगा हुआ है, वहां पर एक हरिजन एम.ए. काम कर रहा है। ऐसी दशा में यदि मैं यहां पर उनके मुताल्लिक यह चीज आपसे मांगता हूं कि इन पब्लिक सर्विस कमीशन्स के अन्दर उनके नुमाइन्दे होने चाहिये और उनके लिये स्पेशल प्रावीजन होना चाहिये, तो यह अनुचित न होगा।

इसलिये मैं फिर डॉक्टर देशमुख जी ने जो संशोधन पेश किये हैं, उनका समर्थन करता हूं।

***श्री एस. नागप्पा** (मद्रास: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं अनुच्छेद 286 का समर्थन करता हूं। समर्थन करते हुये मैं सभा को कुछ उन बातों से सूचित करना चाहता हूं, जो बहुत महत्वपूर्ण हैं। लोक सेवा आयोग के कृत्यों के सम्बन्ध में से एक खण्ड में "परीक्षायें संचालन करना" भी है। जब मैं इन परीक्षाओं के बारे में विचार करता हूं तो मुझे आश्चर्य होता है। इनका सदैव बड़ा बेतुका परिणाम निकलता है। दृष्टान्त के रूप में यदि कोई प्रथम श्रेणी का एम.ए. सेवा आयोग के समक्ष प्रस्तुत होता है, तो वह प्रथम श्रेणी तृतीय श्रेणी हो जाती है और तृतीय श्रेणी का व्यक्ति प्रथम श्रेणी का हो जाता है। कभी कभी तो जिस प्रकार से परीक्षा ली जाती है, उसके सम्बन्ध में जो कुछ कहा जाये वह अधिक नहीं है। प्रश्न इतने मूर्खतापूर्ण होते हैं कि कभी-कभी तो स्वयं प्रश्नकर्ता यह नहीं जानता कि उनके उत्तर क्या होंगे। उदाहरणार्थ वे पूछेंगे–"सूर्य और चन्द्र में कितना अन्तर है?" "आकाश में तारों की संख्या कितनी है?" "दूध सफेद क्यों है?" और ऐसे ही अन्य प्रश्न। और एक बात और है। शारीरिक अनर्हता। "तुम्हारी नाक बहुत सीधी दिखाई देती है।" "तुम्हारी उंगलियां जितनी होनी चाहिये, उससे अधिक लम्बी है।" इन आधारों पर लोगों को अनर्ह कर दिया जाता है। "आह, आप यह भी नहीं जानते कि टाई किस प्रकार बांधी जाती है या कालर किस प्रकार पहना जाता है। आप बूट पहनना नहीं जानते।" इन बातों की परीक्षा ली जाती है। इन लोगों के लिये कोई पाठ्यक्रम विनिहित करना और पाठ्य पस्तकें निर्धारित करना मैं अधिक

[श्री एस. नागप्पा]

अच्छा समझूंगा। केवल मौखिक परीक्षा ही न हो वरन् किसी प्रकार की लिखित परीक्षा भी हो।

अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के सम्बन्ध में तो मैं उन दु:खों का वर्णन ही नहीं कर सकता हूं, जो उन्हें इन परीक्षाओं में झेलने पड़ते हैं। और इन सब दुख और कष्टों के पश्चात् भी क्या उनको ले लिया जाता है? कदापि नहीं, क्योंकि उद्देश्य यह रहता है कि उनकी उपेक्षा की जाये और अनुसूचित जाति के लोगों के लिये आरक्षित स्थान उन सम्प्रदायों के उम्मीदवारों को दिये जायें, जिनका सूची में उनके बाद स्थान है। अपने लोगों का पक्ष करने के लिये उनकी अपनी निराली रीतियां हैं, स्पष्ट अथवा अस्पष्ट। सेवायें प्रशासन तन्त्र का आवश्यक अंग हैं। इसी कारण देश के भिन्न-भिन्न वर्ग के लोगों में सेवायें झगड़े की जड़ है। अत: सब मनुष्यों को समान अवसर मिलना चाहिये। संविधान में किसी अनुच्छेद की परिभाषा कर देने या उसऐ स्वीकार कर लेने से कोई लाभ नहीं। हमें यह देखना है कि जिस सद्भावना से मसौदा बनाया जाता है, उसी सद्भावना से उसके प्रत्येक शब्द और अक्षर को कार्यरूप में परिणित किया जाये। केवल तभी जो कुछ हम यहां करते हैं, वह न्याययुक्त तथा उचित होगा।

इन गरीब पद्दलित लोगों के साथ इस प्रकार जो लगातार अन्याय होता रहा है, वह इस कारण नहीं कि और लोगों को उनके साथ सहानुभूति नहीं, परन्तु दुर्भाग्य यह है कि वह कोरी मौखिक सहानुभूति है जिसको वे यथाशक्य पूर्णतया प्रकट करते हैं। यथार्थता को वह छू तक नहीं पाती है। अत: श्रीमान, यह सब अन्याय होता है। इसका मुख्य कारण यह है कि किसी भी प्रान्तीय लोक सेवा आयोग में या फेडरल लोक सेवा आयोग में अनुसूचित वर्गों का एक भी सदस्य नहीं है। क्या मैं यह पूछ सकता हूं कि यह अन्याय क्यों किया जाता है? मैं आपको दर्जनों ऐसे व्यक्ति दे सकता हूं जिनकी अर्हतायें और स्थिति इन आयोगों के वर्तमान सदस्यों से अधिक उच्च हैं। वर्तमान सदस्यों का क्या आचार विचार है, क्या व्यवहार है? सीता का चरित्र शंका से परे होना चाहिये, पर मुझे यह कहते हुए खेद होता है कि वर्तमान आयोग शंका से परे नहीं है। उनके अपने चोर दरवाजे हैं। उनके अपने प्रकार हैं। श्रीमान, मन्त्री पद धारण करने वाले लोग इन आयोगों के सदस्यों को फोन तक करते हैं और यह निश्चय कर लेते हैं कि किसी विशिष्ट पद के लिये कौन कौन उम्मीदवार हैं और इस बात का प्रयत्न करते हैं कि उनके उम्मीदवारों को अधिमान मिले, चाहे उस पद के लिये सबसे उपयुक्त व्यक्ति कोई हरिजन हो या गैर हरिजन। इस प्रकार से काम किया जा रहा है। हमारे विदेशी स्वामियों के समय में ये बातें होती थीं। पर अब सबको अनुभूति होनी चाहिये कि वह अब एक स्वतन्त्र देश में हैं, और स्वतन्त्रता में सबका हिस्सा है चाहे वह हरिजन हो या गैर हरिजन, चाहे वह अमीर हो या गरीब। केवल तभी हम इस स्वतन्त्रता के योग्य होंगे....।

***अध्यक्ष:** अनेक सदस्यों से मैं यह शिकायत सुन चुका हूं।

***श्री एस. नागप्पा:** श्रीमान, अब मैं अन्य प्रश्न को लूंगा।

***अध्यक्ष:** मैंने अनेक सदस्यों को उन मन्त्रियों, लोक-सेवा-आयोग के सदस्यों और अन्य प्राधिकारियों के विरुद्ध शिकायत करते हुए सुना है, जो अपनी रक्षा करने

के लिये सभा में उपस्थित नहीं हैं। मैं केवल यही कहूंगा कि जिन व्यक्तियों पर सरकारी कर्तव्य का भार रखा गया है, उन पर मनमाने आरोप लगाना ठीक नहीं है। मैं आशा करता हूं कि माननीय सदस्य इस बात का ध्यान रखेंगे। ऐसे कथनों को जनता भिन्न-भिन्न सदस्यों द्वारा किये गये एक पक्ष के कथनों के रूप में स्वीकार करेगी।

***श्री एस. नागप्पा:** आपको अनेकानेक धन्यवाद। मैं आपके आदेश को शिरोधार्य करता हूं। उनको मैं अंगुली तक से नहीं छूऊंगा।

अब मैं उन गुप्त रीतियों का वर्णन करूंगा, जो प्रयोग में लाई जाती हैं। यदि कार्यपालिका 30 या 40 नियुक्तियां करना चाहती है, तो वह यह कहती है कि आपात के कारण वह इतना नहीं ठहर सकती कि लोक सेवा आयोग द्वारा चुनाव हो और फिर नियुक्तियां हों। एक या दो वर्ष के बाद वह सेवा आयोग से कहती है कि उन पदों के लिये विज्ञापन निकाला जाये। कॉलेज के नये स्नातकों के साथ ये लोग भी आवेदन पत्र भेजते हैं, जिनको कार्यालय में एक वर्ष का अनुभव हो जाता है और यह स्वाभाविक ही है कि वे चुन लिये जाते हैं। प्रत्येक प्रान्त में इस प्रकार की गुप्त रीतियां प्रयोग में लाई जा रही हैं। अन्य प्रातों के लिये मैं नहीं कह सकता हूं, पर मेरे मद्रास प्रान्त में तो यही हो रहा है। सैकड़ों नियुक्तियां इस प्रकार से की जाती हैं।

***अध्यक्ष:** ठीक इसी बात पर मैंने आपत्ति की थी। माननीय सदस्य से मैं यह निवेदन करूंगा कि उचित स्थान में इस विषय के सम्बन्ध में वे अपने उद्‌गार प्रकट करें। यहां तो उन्हें विचारान्तर्गत अनुच्छेद पर ही अपने विचार सीमित रखते हैं, जो लोक सेवा आयोग सम्बन्धी हैं न कि नियुक्तियों के विषय पर जो कि किसी मंत्रालय ने कर ली है या किसी मंत्रालय द्वारा किये जाने की सम्भावना है।

***श्री एस. नागप्पा:** उसके कृत्यों के सम्बन्ध में मैं सभा से निवेदन करूंगा कि सेवा आयोग और अधिक दक्ष बनाया जाये। वह आज अभ्यर्थियों से मुलाकात करता है और महीनों बाद उसका परिणाम निकालता है। वह और अधिक दक्ष होना चाहिये। उसे शीघ्रता से कार्य करना चाहिये। यदि उसको आवश्यकता है तो वह अधिक कर्मचारी रख सकता है।

इस विशिष्ट उपबन्ध के रखने के प्रति मैं डॉ. अम्बेडकर और मसौदा समिति का बड़ा कृतज्ञ हूं। वह उपबन्ध यह है "संघ अथवा राज्य में पिछड़े हुए वर्ग के नागरिकों के लिये नियुक्तियां और पद रक्षित रखे जायेंगे"। पर जैसा कि मेरे मित्र श्री कामत ने कहा था कि इस आरक्षण का आधार क्या है? चाहे वह आधार जनसंख्या हो अथवा कोई अन्य आधार हो, उसका विनिधान होना चाहिये। ठीक और साम्यरूपता के कारण मैं यह अधिक अच्छा समझूंगा कि जनसंख्या के आधार पर आरक्षण हो।

दूसरी बात यह है कि "पिछड़े हुए वर्ग" में बहुत अधिक वर्गों का समावेश होता है। मैं डॉ. अम्बेडकर से यह निवेदन करूंगा कि इस श्रेणी में कौन-कौन आते हैं। मैं समझता हूं कि उनके विचार में अनुसूचित वर्ग, अनुसूचित आदिम जाति तथा अन्य पिछड़े हुए वर्ग हैं। यदि अन्य कोई हों तो मैं निवेदन करूंगा कि वे इस समय उन्हें बता दें।

[श्री एस. नागप्पा]

इस खण्ड से यह प्रतीत होता है कि पदों की कुछ श्रेणियां अलग कर दी गई हैं। यद्यपि प्रशासन के दृष्टिकोण से यह आवश्यक है कि उनको अलग रखा जाये, पर कार्यपालिका को यह बात ध्यान में रखनी चाहिये कि इस खण्ड में पिछड़े हुए वर्ग के लिये आरक्षण है और कार्यपालिका द्वारा इस खण्ड को क्रियात्मक रूप दिया जाना चाहिये और इन पदों में से कुछ पद पिछड़े हुए वर्गों को भी मिलने चाहिये।

मुझे खुशी है कि एक और उपबन्ध है, जिसके द्वारा इन बातों को जांच के लिये संसद के समक्ष प्रस्तुत किया जायेगा। पर उससे लाभ क्या? ये बातें संसद के समक्ष उस समय आयेंगी, जब उन पर कार्यवाही की जा चुकेगी। यह कोई रोकथाम की नीति नहीं है। संसद को केवल जो कुछ हो चुका है, उसकी जांच करने का ही अवसर मिलेगा। मैं इस सभा के सदस्यों से निवेदन करूंगा कि इस खण्ड को जिस रूप में वह है, उस रूप में उसका समर्थन करे और मैं अपने माननीय मित्र डॉ. अम्बेडकर से निवेदन करूंगा कि वे कृपा कर यह बता दें कि "पिछड़े हुए वर्ग" से क्या आशर्य है, कौन-कौन लोग इस श्रेणी के अन्तर्गत आते हैं। मैं उनसे निवेदन करूंगा कि कृपा वे इस बात को स्पष्ट कर दें।

***श्री राजबहादुर:** अध्यक्ष महोदय, इस अनुच्छेद पर वाद-विवाद ने कुछ सिद्धान्त सम्बन्धी प्रमुख प्रश्नों तथा राष्ट्रीय नीति के कुछ प्रमुख प्रश्नों को भी हम लोगों के सामने प्रस्तुत किया है। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि अनुच्छेद 286 का खण्ड (4) हमें केवल उस विषैले फोड़े की याद दिलाता है, जिससे हमारी राज्य-संस्था इतने दीर्घकाल से पीड़ित है—मेरा आशय जाति पद्धति के अभिशाप से है। मेरे मित्र डॉ. देशमुख और सरदार हुकम सिंह ने जो संशोधन संख्या 86 और 87 पेश किये हैं, वे भी इसी ओर संकेत करते हैं इस बात को बिना किसी संकोच के स्वीकार करना पड़ेगा कि देश की भिन्न-भिन्न जातियों और वर्गों में सेवाओं और पदों के बंटवारे में अन्याय और असमानता रही है। जैसा कि मैंने उस दिन कहा था कि जिन लोगों के हाथ में शक्ति है उनकी और से कुछ पक्षपात तथा कुलपोषणता हुई है। पर इसके अतिरिक्त कुछ उन मनोवैज्ञानिक परिस्थितियों और परम्पराओं पर भी इस कथित अन्याय का उत्तरदायित्व है, जो हमारे समस्त इतिहास में व्यापक रही है।

फिर भी, श्रीमान, मैं यह निवेदन करूंगा कि हमें बुराई की जड़ पकड़नी चाहिये। बुराई का निराकरण इस बात में नहीं है कि राज्य की सेवाओं के कुछ पद हम उन लोगों को दे दें, जो देहातों में रहते हैं या उन लोगों को दे दें जो नगरों में रहते हैं। इसका उपचार तो कदाचित कहीं अन्यत्र ही है। इन अन्यायों और असमानता का कारण हम जाति व्यवस्था के दुर्गुणों में पा सकते हैं—वह दुर्गुण जो हमारे दीर्घकालीन दासत्व के प्रति उत्तरदायी था—वह दुर्गण जिसके फलस्वरूप हमारा नैतिक तथा राजनैतिक पतन हुआ है—वह दुर्गुण जिसने अस्पृश्यता इत्यादि अनेक अन्य दुर्गुणों को जन्म दिया है। यह तो उस दुर्गण का केवल एक लक्षण है कि सेवाओं में सब सम्प्रदायों को समान या ठीक रूप से प्रतिनिधित्व नहीं मिला है। सेवाओं में वर्ग या जाति के आधार पर प्रतिनिधित्व की मांग करना तो उस रोग से नाममात्र का छुटकारा पाना है। पर हमें तो आमूल इस रोग का इलाज करना है।

श्रीमान, मैं निवेदन करूंगा कि यदि हम अपने देश में उत्तम शासन व्यवस्था चाहते हैं, तो हमें सेवाओं में सर्वोत्तम व्यक्तियों को रखना चाहिये–जो सर्वोत्तम व्यक्ति मिल सकें, बहुत योग्य और ईमानदार व्यक्ति जिनको हम प्राप्त कर सकें। हम अपनी स्वतन्त्रता से जूआ नहीं खेल सकते हैं। देहाती तथा नगरों के कुछ वर्गों के कुछ व्यक्तियों के लिये पदों की व्यवस्था के प्रयत्न के द्वारा हम राष्ट्र की शान्ति, उन्नति और क्षेत्र से जूआ नहीं खेल सकते हैं।

डॉ. देशमुख द्वारा प्रस्थापित संशोधन पर मेरी आपत्ति अन्याय के प्रति सहानुभूति के किसी अभाव के कारण नहीं है—मैं यह मानता हूं कि इस अन्याय के कारण कुछ वर्ग कष्ट पा रहे हैं। मेरी आपत्ति इस आधार पर आश्रित है कि प्रस्थापित संशोधन स्पष्टतया उस दुर्गुण को जारी रखने का प्रयत्न करते हैं, जिनके कारण हम दुख पाते रहे हैं और जिनको हम निकालना चाहते हैं। संशोधनों में स्पष्टतया राज्य की सेवाओं में जाति और वर्गों के आधार पर प्रतिनिधित्व को माना गया है। यह वह समय है जबकि हमें यह मान लेना चाहिये कि हमारी रक्षा, हमारी स्वतंत्रता की रक्षा हमारे एकत्व में, हमारे सम्पूर्ण राष्ट्र को समत्व रूप देने में है। मैं यह निवेदन करूंगा कि तर्क के लिये यदि हम इस सिद्धान्त को मान लें कि जाति और वर्ग के आधार पर नियुक्तियां करनी चाहिये, तो आइये हम यह विचार करें कि इसका क्या परिणाम होगा। यह स्पष्ट है कि उस दशा में हमें अपनी राज्यभक्ति और निष्ठा के केन्द्र को बदलना होगा। एक समूच राष्ट्र के प्रति भक्ति और निष्ठा होने के स्थान में किसी यूथ या किसी वर्ग या जाति के हितों के प्रति भक्ति और निष्ठा होगी। राष्ट्र के प्रति निष्ठा को केवल द्वितीय स्थान प्राप्त होगा। हमारी मुख्य निष्ठा वर्ग या जाति के प्रति होगी। यह एक ऐसा दुर्गण है जिससे हम इतने काल तक पीड़ित रहे हैं—यह वह दुर्गुण है जिसके कारण देश का विभाजन हुआ। इसके कारण उन्नति के प्रति समस्त उत्साह लुप्त हो जायेगा। जब आप यह कहते हैं कि जाति या वर्ग के आधार पर सेवाओं में प्रतिनिधित्व होना चाहिये, तो आप आत्मोन्नति का सारा उत्साह भंग कर देते हैं। दक्षता के प्रति समस्त उत्साह ठंडा पड़ जायेगा।

***डा. पी.एस. देशमुखः** मैंने यह नहीं कहा था कि जाति अथवा वर्ग के आधार पर प्रतिनिधित्व होना चाहिये।

***श्री राजबहादुरः** आपके संशोधन में यही कहा गया है:

"अथवा संघ की या किसी राज्य की लोक सेवाओं में सब वर्गों का ठीक तथा उचित प्रतिनिधित्व कराने के प्रयोजन से।"

यहां आप वर्ग के आधार पर सेवाओं में प्रतिनिधित्व के सिद्धान्त को मानते हैं। यदि आप ऐसा करते हैं तो उन्नति करने का समस्त उत्साह दक्षता के लिये सारा उत्साह लुप्त हो जायेगा। जब उन्नति और दक्षता के लिये उत्साह लुप्त हो जाता है, तो समस्त राष्ट्र का पतन हो जाता है। ऐसी दशा में हम भी पार्थक्यवाद के दुर्गुण, यूथ या वर्ग ईर्ष्या के दुर्गुण से दूषित बने रहेंगे।

श्रीमान, मैं यह निवेदन करूंगा कि यह दुर्गुण इससे भी और अधिक बढ़ जायेगा और हमारे राष्ट्रीय जीवन के सब पहलुओं में समा जायेगा। और फिर राष्ट्र के

[श्री राजबहादुर]

प्रति भक्ति या सेवा के आधार पर, राष्ट्र के हेतु बलिदान करने की सद्भावना और क्षमता के आधार पर निर्वाचन नहीं लड़े जायेंगे वरन् वर्ग के प्रति भक्ति के आधार पर लड़े जायेंगे। क्या हम ऐसा होने देंगे? मैं आदरपूर्वक निवेदन करता हूं कि ऐसा हम नहीं होने देंगे। ऐसा बहुत कुछ हो चुका और अब वह समय है कि हमें इन सब वर्ग या जाति सम्बन्धी भेद विभेदों को मिटाने का प्रयत्न करना चाहिये। डॉ. देशमुख के संशोधन का समर्थन करते हुए मेरे माननीय मित्र श्री फूल सिंह ने ऐसे उदाहरण दिये थे, जिनमें लोग ऐसे पदों पर पहुंच गये जिनके वे योग्य नहीं थे। मैं निवेदन करता हूं कि उन उदाहरणों को देते हुए वे स्वयं अपने दृष्टिकोण से विमुख हो गये हैं। उससे केवल यह सिद्ध होता है कि योग्यता के अतिरिक्त अन्य विचारों के आधार पर उन लोगों को नियुक्त किया गया है। यह कहना कि देहाती क्षेत्रों के लोग ही अच्छे हैं या नगर-निवासी ही अच्छे हैं, सही नहीं है। अच्छे बुरे आदमी हमें सब जगह मिलने हैं। योग्य और अयोग्य व्यक्ति हमें सब वर्गों में और जीवन के प्रत्येक अंग में मिलते हैं। किसी एक व्यक्ति पर पूर्णतया अच्छे होने की मुहर लगाना और किसी अन्य व्यक्ति पर पूर्णतया बुरे होने की मुहर लगाना बुद्धिमानी नहीं है। बल्कि मेरी सम्मति से तो यह केवल मूर्खता ही है। कोई भी व्यक्ति पूर्णतया अच्छा अथवा पूर्णतया बुरा नहीं है। हमारे एक प्रसिद्ध कवि ने कहा है:

'जिस व्यक्ति की, कुटिल समझ कर, लोगों ने निन्दा की है उसमें मुझे इतनी अच्छाइयां मिलती हैं और जिस व्यक्ति को लोग देवता तुल्य समझते हैं, उसमें मुझे इतने दोष और कलंक दिखाई देते हैं कि अच्छे और बुरों को पृथक् बताने में मुझे संकोच होता है और ईश्वर ने भी ऐसा नहीं किया है।'

हम सब गुण और दोषों के मिश्रण हैं। हम सबमें योग्यता तथा अयोग्यता, पूर्णता तथा अपूर्णता का मेल है। केवल ईश्वर की पूर्ण है। अत: यह अच्छा है कि हम सब प्रकार की वर्ग ईर्ष्या और जाति भक्ति को दूर कर दें। इसी प्रकार से हम राष्ट्र को शक्तिशाली बना सकते हैं।

हम पर केवल वर्तमान पीढ़ी का ही उत्तरदायित्व नहीं है, वरन् आगे आने वाली सन्तति का भी उत्तरदायित्व है। यदि हम वर्ग भेद विभेद के दोष को, जिससे हम इतने काल के पीड़ित हैं, जारी रखने का प्रयत्न करते हैं तो हम अपनी आगे आने वाली संतति के साथ सच्चाई का व्यवहार नहीं करते हैं। अत: मेरे माननीय मित्र डॉ. देशमुख द्वारा पेश किये संशोधनों के सिद्धान्तों से में पूर्णतया असहमत हूं।

श्रीमान, उन टिप्पणियों के बारे में मैं एक बात और कहना चाहता हूं, जो उन भेद विभेद तथा कमियों के सम्बन्ध में की गई हैं, जिनका अनुभव देहाती सम्प्रदायों और अनुसूचित जातियों को हुआ है। मैं यह निवेदन कर चुका हूं कि हमें यह मानना पड़ेगा कि ये असमानता वर्तमान है, पर मैं यह निवेदन करता हूं कि ये केवल रोग के लक्षण मात्र हैं और यदि हम इन असमानताओं या अन्यायों का निराकरण करना चाहते हैं, तो हमें रोग के लक्षणों के इलाज करने के लिये प्रयत्नशील नहीं होना चाहिये, वरन् हमें दोष की जड़ तक पहुंचना चाहिये और स्वयं दोष को मिटाना चाहिये, अपेक्षाकृत इसके कि हम इधर-उधर नाममात्र के उपचारों में

भटकते रहें। मैं निवेदन करूंगा कि ये पद, सेवायें, और विधानमण्डलों के स्थान हमारे राष्ट्र के लिये सदैव फूट की जड़ के रूप में रहे हैं। इस फूट की जड़ से हमें सावधान रहना चाहिये। इस देश को हमें एक संयुक्त दृढ़ राष्ट्र बनाने का प्रयत्न करना चाहिये। हमें यह प्रयत्न करना चाहिये कि उन सब घाट तक प्रवृत्तियों और कारणों का नाश हो जो हमारी फूट के प्रति उत्तरदायी हैं। अतः मैं डाक्टर देशमुख और सरदार हुकम सिंह से यह निवेदन करूंगा कि वे अपने संशोधनों को वापस ले लें।

श्रीमान, जहां तक सरदार हुकम सिंह के संशोधन का सम्बन्ध है, मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि यह संशोधन जिस प्रयोजन के लिये पेश किया गया है, उसी का वह विरोध करता है। उनका संशोधन इस प्रकार है—"पिछड़े हुए वर्ग के नागरिकों का आर्थिक तथा शैक्षणिक रूप में पिछड़े हुए वर्ग या वर्गों से अभिप्रेत होगा और ऐसी ही वर्ग उसके अन्तर्गत आयेंगे"। "पिछड़े हुए वर्गों" का कुछ भी अर्थ हो सकता है—शैक्षणिक, आर्थिक, सामाजिक अथवा अन्य रूप में पिछड़े हुए। उसके अर्थ को यहां विशिष्ट करने अथवा निर्बन्धित करने का प्रयत्न क्यों करते हैं? मैं समझता हूं कि वर्त्तमान रूप में यह पद बहुत अधिक व्यापक है और इसको ज्यों का त्यों छोड़ देना चाहिये। मैं निवेदन करता हूं कि अब वह समय है कि हमें इस प्रकार के सब वर्गान्तरों और वर्ग-ईर्ष्या को छोड़ने का प्रयत्न करना चाहिये। मेरे विचार में तो इसका ठीक उपचार यह है कि हमें इसकी जड़ अर्थात् जाति व्यवस्था के आधार पर कुठाराघात करना चाहिये। किसी प्रभावी विधान द्वारा जितना शीघ्र हो सके, हमें इसे मिटाने, का प्रत्यन करना चाहिये, जिससे कि आगे चलकर वर्गों में परस्पर किसी प्रकार के भेद विभेद अन्तर या जाति या सम्प्रदायों को न माना जाये और आगे चलकर यह अनिवार्य कर दिया जाये कि तत्कथित किसी एक जाति मैं पैदा हुआ व्यक्ति अपना, अपने पुत्रों अथवा पुत्रियों का विवाह उसी जाति में न करेगा। अपनी ही जाति में विवाह करना दण्डनीय बना दिया जाये। वर्त्तमान काल में मुझे केवल यही उपचार दिखाई देता है। केवल विधान अधिनियमन द्वारा ही जाति व्यवस्था के इस दोष से हम मुक्त हो सकते हैं। कृत्रिम उपायों से हम इस दोष को नहीं मिटा सकते हैं।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर** (मद्रासः जनरल): श्रीमान, एक कल्याणकारी, योग्य और ईमानदार लोक-सेवा सरकार या उसके प्रशासन का रीढ़ स्तम्भ है। इस आधार पर यदि हम खण्ड की कुछ सावधानी से जांच करें तो उससे हमें अच्छा लाभ होगा।

मुझे विश्वास है कि यहां इस सेवा सम्बन्धी और लोक सेवा आयोग द्वारा किये गये प्रकार्यों की रीति सम्बन्धी जो कुछ भी शिकायत हमारे सामने की गई हैं, उन सब कमियों को भारतीय सरकार के अधिनियम की वर्तमान धारा 266 में दिये गये इन विभिन्न संशोधनों द्वारा दूर करने का प्रयत्न किया गया है। यद्यपि मैं श्री नागप्पा से सहमत नहीं हूं, पर उन्होंने कहा था कि चाहे प्रान्तीय हो अथवा केन्द्रीय वर्तमान लोक सेवा आयोग इतने बुरे हैं, जितने कि उन्होंने बताये थे। एक या दो उम्मीदवारों के साथ कोई भी लोक सेवा आयोग या राज्य आयोग पर्याप्त या पूर्ण न्याय नहीं कर सकता है। जिसका आवेदन पत्र स्वीकार नहीं किया जाता है, वही लोक सेवा आयोग को दोष देने लगता है। और यह भूल जाता है कि उस जैसे बहुत हैं और यह कहता है कि वह आयोग द्वारा निर्धारित परीक्षा में सफल हो सकता था। कठिनाई भी हुई होंगी, कुछ ऐसे उदाहरण हो सकते हैं, जहां वास्तव

[श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर]

में कठिनाई हुई हों और जिस व्यक्ति को कठिनाई हुई हो वह उसका पात्र न हो। अत: व्यक्तियों के प्रश्न को लेकर झगड़ना अच्छा नहीं है। यह सत्य है कि इन लोक-सेवाओं के लिये भी ठीक-ठीक व्यक्ति चुने जाने चाहिये, कर्मचारीवृन्द तथा अन्य विषय सम्बन्धी उपबन्ध बनाये जा चुके हैं। अब हम इस स्थिति में हैं कि प्रकार्य निर्धारित करें और यह देखें कि उन प्रकार्यों का उचित रूप में निर्वहन हो रहा है।

नियुक्तियों की रीति और अर्हताओं के सम्बन्ध का विषय एक विशेष दशा में राष्ट्रपति पर तथा अन्य राज्य के राज्यपाल या शासक पर छोड़ दिया गया है, पर उन सब दशाओं में वे अपने मन्त्रियों की मन्त्रण के अनुसार कार्य करेंगे। लोक प्रिय सरकारें होंगी ही, पर एक बार जब वे नियुक्त कर देंगे, जो फिर उन्हें लोक सेवा आयोगों के सदस्यों के कार्य संचालन और विनियमों से कोई सम्बन्ध नहीं रहेगा। वे पूर्णतया स्वतन्त्र और उनकी स्वतन्त्रता में समय-समय पर कार्यपालिका द्वारा हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता। यह प्रत्याभूति है। यहां तक कि उनको हटाने के लिये भी हमारे यहां एक और ही पद्धति है और मनमाने रूप में उनके कार्य में हस्तेक्षप नहीं किया जा सकता है। पहिले हम जो अनुच्छेद पारित कर चुके हैं, उनमें राष्ट्रपति या संसद द्वारा यह अवश्य विनिहित किया जायेगा और यह उपक्रम किया जा चुका है कि इस बात का सुनिश्चयन हो कि इन लोक सेवा आयोगों के प्रशासन के विषय में बड़ी सच्चाई और ईमानदारी रहे।

उनके प्रकार्य क्या हैं? श्री नागप्पा द्वारा की गई शिकायतों में से कुछ शिकायतें भारत शासन अधिनियम की धारा 266 के कुछ उपबन्धों के कारण है। ऐसा नहीं होता है कि वर्तमान भारतीय सरकार के अधीन लोक सेवाओं के लिये की गई प्रत्येक नियुक्ति लोक सेवा आयोग द्वारा की जाये। उसमें कुछ अपवाद होते हैं। वर्तमान अधिनियम में गवर्नर जनरल नियुक्तियों के कुछ खण्डों को लोक सेवा आयोग के क्षेत्र से हटाने के नियम और विनियम निर्धारित कर सकता है। उनको भी माना जाता है और एक ऐसा उपबन्ध उस अनुच्छेद के मसौदे में पाया जाता है। पर यहां एक रक्षाकवच रख दिया गया है, जिसका भारतीय सरकार के वर्तमान अधिनियम में अभाव है। पहले खण्ड में के उपबन्ध से असमान रूप में रक्षाकवच यह है कि जब किसी विशिष्ट नियुक्ति को क्षेत्र को बाहर कर दिया जाता है, तो उस नियुक्ति के सम्बन्ध में लोक सेवा आयोग से परामर्श करना आवश्यक नहीं। अनुच्छेद 286 के खण्ड (3) में कहा गया है कि "यथा स्थिति संघ लोक सेवा आयोग या राज्य लोक सेवा आयोग से परामर्श किया जायेगा, इत्यादि इत्यादि" और इसके बाद "परन्तु अखिल भारतीय सेवाओं के बारे में तथा संघ कार्यों से संसक्त अन्य सेवाओं और पदों के बारे में भी राष्ट्रपति तथा राज्य के कार्यों से संसक्त अन्य सेवाओं और पदों के बारे में यथास्थिति राज्यपाल या शासक उन विषयों का उल्लेख करने वाले विनियम बना सकेगा, जिनमें साधारणतया अथवा किसी विशेष वर्ग के मामले में लोक सेवा आयोग से परामर्श किया जाना आवश्यक न होगा"। एक इसी प्रकार का उपबन्ध भारत शासन अधिनियम में आज भी है और हो सकता है कि उसके कारण बहुत से दुरुपयोग मंत्रालय द्वारा बिना लोक सेवा आयोग के परामर्श के चुनाव करने के विषय में हुए हों। खण्ड 5 के उपबन्धों में इसके निराकरण

करने का प्रयास किया गया है, जिसमें कहा गया है "इस अनुच्छेद के खण्ड (3) के परन्तुक के अधीन राष्ट्रपति अथवा किसी राज्य के राज्यपाल या शासक द्वारा बनाये गये सब विनियम संसद या राज्य के अपने-अपने विधान-मण्डलों में रखे जायेंगे"। यह रक्षा कवच है। वे विधानमण्डल में जांच के लिये प्रस्तुत होंगे और समय-समय पर उनमें संशोधन होंगे।

श्री नागप्पा ने जो दूसरी आपत्ति की थी, वह यह थी कि नियुक्तियां एक वर्ष पूर्व कर ली जाती हैं और बाद में उन नियुक्तियों के लिये लोक सेवा आयोग द्वारा विज्ञापन निकाला जाता है और विभागों ने जिन लोगों को नियुक्त कर लिया है, उनको इस आधार पर कि वे अनुभवी हैं, आगे बढ़ाने का विभागों द्वारा प्रयत्न किया जाता है। ऐसी बातें होती हैं। यह केवल सम्बद्ध मन्त्री का ही दोष नहीं है। माननीय श्री सन्तानम को मैंने यह कहते हुए सुना है कि वे किसी नियुक्ति के लिये लोक सेवा आयोग द्वारा चुनाव चाहते थे, पर आयोग को चुनाव करने का समय ही नहीं मिला और सात आठ महीने तक मामला वहां पड़ा रहा और इस प्रयोजन के हेतु उन्हें वह नियुक्ति रोकनी पड़ी। कुछ ऐसी अवस्थायें हो जाती हैं जिनमें बहुत से आवेदन पत्र आ जाने पर और कर्मचारियों की कमी के कारण लोक सेवा आयोग का सयम नहीं मिल पाता। ऐसी स्थितियां अपवादस्वरूप हैं और वास्तविक स्थिति ऐसी है कि उनको अपवादस्वरूप होना चाहिये। मैं आशा करता हूं कि आगे आने वाले वर्षों में श्री नागप्पा ने जैसी शिकायत की है, उसके लिये कोई आधार नहीं रहेगा और खण्ड (5) के अधीन जो नियम हम अब बना रहे हैं, उनसे हम इन असुविधाओं से बच जायेंगे और सद्भावना पूर्वक मुझे यह विश्वास है कि भविष्य में ऐसी बातें नहीं होंगी।

इसके बाद जिस रीति से इन लोक सेवा आयोगों को कार्य करना है, उसके सम्बन्ध में सबसे पहली आवश्यकता यह है कि केवल योग्यता के आधार पर सब नियुक्तियां लोक प्रशासन के हित में की जायेंगी। पर अपने देश की दशा पर विचार करते हुए उन लोगों के लिये कुछ उपबन्ध होने चाहियें, जिनकी आर्थिक तथा सामाजिक रूप में भी उन्नति नहीं हुई है और इस कारण जो उस स्तर पर आने में असमर्थ हैं। पर इसमें कुछ परिसीमा अवश्य होनी चाहिये। जिन नियुक्तियों के लिये बहुत चातुर्य और कार्यक्षमता अपेक्षित है, उनके लिये इन नियमों में कोई गुंजाइश नहीं रखी जा सकती है, क्योंकि लोक हित की मांग उसके विपरीत है। उदाहरणार्थ एक कुशल शल्य चिकित्सक को लीजिये, केवल इस आधार पर कि वह किसी विशिष्ट जाति का है, उसे उस पद के लिये नहीं लेना चाहिये। पदों की अन्य श्रेणियां हैं, जिनके लिये इतने अधिक औद्योगिक चातुर्य और कार्यक्षमता की आवश्यकता न हो और उनका बंटवारा किया जा सकता है। संविधान में कोई कड़ा निश्चित नियम नहीं रखा जा सकता है। इस कारण पिछड़े हुए वर्गों के लिये कुछ उपबन्ध बनाये गये हैं। कुछ ऐसे सम्प्रदाय हैं, जो व्यापार करते हैं—उदाहरण के रूप में मार बड़ी सम्प्रदाय को ले लीजिये। वे धनी हैं और व्यापार करते हैं। वर्तमान परिस्थितियों में क्या उनको यह अधिकार है कि वे ये कहें कि सेवाओं में उनको उचित प्रतिनिधित्व नहीं मिला? सच तो यह है कि लोक सेवाओं में उनके लिये कोई आकर्षण नहीं है। एक कुटुम्ब के दो या तीन व्यक्ति व्यापार में लग जाते हैं और लखपति बन जाते हैं। यह सच है कि उनमे से एक भी

[श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर]

लोक सेवा में नहीं है। धनिक वर्गों को प्रतिनिधित्व देने से बचने के लिऐ "सम्प्रदाय" शब्द के स्थान में "पिछड़े हुए वर्ग" पद रखा गया है। यद्यपि "पिछड़े हुए वर्ग" पद की परिभाषा नहीं की गई है, पर मुझे विश्वास है कि राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त आयोग यह विनिश्चित कर देगा कि पिछड़े हुए वर्गों में कौन-कौन हैं। प्रत्येक सम्प्रदाय में पिछड़े हुए वर्ग हैं। अतः इन पिछड़े हुए वर्गों पर अधिक ध्यान देना पड़ेगा। व्यक्तियों का कोई वर्ग पिछड़ा हुआ है या नहीं यह बात जाति या सम्प्रदाय पर निर्भर नहीं करती है। एक वर्ग धनी है और दूसरा निर्धन। कुछ वर्गों को आर्थिक लाभ है और कुछ को नहीं। पिछड़े हुए वर्ग पर पर्याप्त रूप से व्यापक है। यह मालूम करने के लिये कि पिछड़े हुए लोग कौन हैं, अनुच्छेद 301 के अधीन इस विषय के लिये एक आयोग नियुक्त किया जायेगा और मुझे विश्वास है कि जिनको ऐसा समझा जायेगा वे इस खण्ड के अधीन आ जायेंगे, जिनके लिये इसमें विशेष आरक्षण का प्रयास किया गया है। मूलाधिकारों के अनुच्छेद 10 के अधीन यह कहा गया है कि कोई विभेद नहीं किया जायेगा, पर पिछड़े हुए वर्गों के उन लोगों को विशेष सहायता प्रदान करने के लिये विभेद किया जायेगा जिनको अब से बाद में पिछड़ा हुआ समझा जायेगा या जिनके नाम आयोग द्वारा अनुसंधान किये जाने पर इस वर्ग में घोषित किये जायेंगे। मुझे विश्वास है कि डॉ. देशमुख को पर्याप्त संतोष हो गया होगा। जब यह विषय आयोग के समक्ष प्रस्तुत होगा, तो उसके सामने इन भिन्न-भिन्न उप-जातियों और अन्य वर्गों के मामले रखने के लिये पर्याप्त समय मिलेगा, जिससे कि उन सबके लिए साथ, जिनको विशेष सहायता की आवश्यकता है, न्याय किया जा सके।

भारत शासन अधिनियम 1935 की धारा 266 के अधीन वर्तमान वस्तुस्थिति में इस अनुच्छेद द्वारा एक और सुधार किया गया है। लोक सेवा आयोग के परामर्श के लिये रखे जाने वाले विषयों में यदि कोई विषय बढ़ाया जाता है, तो विधेयक के पुरःस्थापन करने के पूर्व संसदीय अधिनियम के लिये राष्ट्रपति या गवर्नर जनरल की मंजूरी लेनी होगी। नये अनुच्छेद के अधीन लोक सेवा आयोग को, चाहे केन्द्र का हो या प्रान्त का, अतिरिक्त शक्तियों या विषयों को देने वाले विधेयक के पुरःस्थापन के लिये राष्ट्रपति की मंजूरी आवश्यक नहीं है। सरकारी या गैर-सरकारी सदस्य को यह अधिकार है कि वह जब आवश्यक हो, तभी विधेयक का पुरःस्थापन कर दे और संविधान के क्रियाकरण का कुछ अनुभव प्राप्त कर लेने के पश्चात् सीधे सभा का मत संग्रह करे और उस विधेयक को पारित कराये। यह एक दूसरा सुधार है। भारतीय शासन अधिनियम 1935 के क्रियाकरण का अनुभव प्राप्त कर लेने के पश्चात् व्यवहार में जितने दोष दिखाई पड़े उन सबको, पिछड़े हुए वर्गों के लिए विशेष उपबन्ध बना कर, यह देखकर कि कुछ बातों को लोक सेवा आयोग के अधिकार क्षेत्र से बाहर रखने के लिये नियमों और विनियमों को समय-समय पर संसद के समक्ष जांच के लिये रखना और उस उपबन्ध का अपमार्जन कर, जिसके द्वारा लोक सेवा आयोग को अधिक शक्तियां सौंपने के विधेयक का पुरःस्थापन करने के लिये राष्ट्रपति की मंजूरी अपेक्षित थी, दूर कर दिया है। मैं सभा से निवेदन करता हूं कि इन अनुच्छेदों में इन बातों का सुधार किया है। मैं आशा करता हूं कि भगवान की कृपा से ये उपबन्ध कल्याणकारी होंगे। यदि दैवात् संविधान के क्रियाकरण के पश्चात् यदि हमें और अधिक दोष दिखाई देते हैं, तो अनुच्छेद 286 में एक ऐसा उपबन्ध है, जिसके द्वारा हम इन उपबन्धों में संशोधन कर सकते

हैं। आखिरकार किसी संस्था की सफलता, जो नियम तथा विनियम निर्मित किये जाते हैं, उन पर इतनी निर्भर करती है, जितनी कि उस संस्था के चलाने वाले व्यक्तियों की सच्चाई, कार्यदक्षता और ईमानदारी पर निर्भर नहीं करती है; यद्यपि यह सच है कि नियम तथा विनियम आवश्यक अवश्य हैं। हम यह आशा करें कि व्यवहार में इन सब दोषों का निराकरण हो जायेगा, लोक सेवा आयोग के प्रशासन का प्रभार ईमानदार, खरे और लोक हितैषी व्यक्तियों के हाथ में होगा और कुलपोषणता या पक्षपात का जो दुर्गुण रहा है, वह पूर्णतया मिट जायेगा।

***पं. हृदयनाथ कुंजरूः** (संयुक्त प्रान्तः जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं समझता हूं कि जो अनुच्छेद हमारे सामने हैं, उसमें भारत अधिनियम 1935 या संविधान के मसौदे में लोक सेवा आयोग सम्बन्धी उपबन्धों की अपेक्षा बहुत सुधार कर दिये गये हैं। मेरे माननीय मित्र श्री अनन्तशयनम् आयंगर ने एक या दो विषयों को बताया है, जिसके सम्बन्ध में यह नया मसौदा भारत शासन अधिनियम 1935 या संविधान के मसौदे में दिये हुए उपबन्धों से अच्छा है। मैं इस विचाराधीन अनुच्छेद की अन्य और भी अधिक महत्वपूर्ण बातें बताऊंगा, जिनका प्रत्येक वह व्यक्ति स्वागत करेगा, जो लोक सेवा आयोगों को नियुक्त करने के अभिप्राय को समझता है।

जैसा कि अनेक सदस्यों ने कहा है, उसका उद्देश्य राज्य के लिये उन कार्यकुशल लोक सेवकों को प्राप्त करना है, जो सब लोगों की समान रूप में सेवा करें और जो सदैव सब सम्प्रदायों और राज्य के हितों पर ध्यान देते रहें। जो उपबन्ध आजकल प्रवर्त्तन में हैं, उनमें कार्यपालिका के हस्तक्षेप के लिये बहुत गुंजाइश है। भारत शासन अधिनियम 1935 गवर्नर जनरल को किसी भी विषय को, जिसके सम्बन्ध में फैडरल लोक सेवा आयोग से परामर्श करना आवश्यक नहीं है, विनियम द्वारा उल्लेख करने की शक्ति देता है। ये विनियम अनावश्यक रूप में व्यापक हो सकते हैं या उनको समय समय पर इस प्रकार से बदला जा सकता है कि कार्यपालिका पर्याप्त मात्रा में अवांछनीय प्रभाव डाल सके। अब जिस प्रकार से अनुच्छेद 286 का मसौदा बनाया गया है, उसमें कुछ रोक की व्यवस्था है और कार्यपालिका की मनमानी इच्छा के विरुद्ध एक अच्छा प्रतिरोध है। राष्ट्रपति या राज्यपाल को उन विषयों का उल्लेख करने की शक्ति होगी, जिनके सम्बन्ध में लोक सेवा आयोग से परामर्श करना आवश्यक न हो, पर इसके साथ-साथ यह उसका कर्तव्य होगा कि अपने बनाये हुए विनियमों को संसद के समक्ष रखे और संसद को केवल उन विनियमों की आलोचना करने की शक्ति नहीं होगी वरन वह जैसा चाहे वैसा संशोधन उनमें कर सकेगी। अतः हम यह विश्वास कर सकते हैं कि राष्ट्रपति या राज्यपाल द्वारा कोई ऐसा विनियम नहीं बनाया जायेगा, जिसके लिये लोकमत प्राप्त करना सम्भव न हो। यदि उसे सही पथ से विचलित होने का प्रलोभन होता है, तो उस प्रलोभन के वशीभूत होने में वह संकोच करेगा, क्योंकि उसे यह ध्यान रहेगा कि उसके विनियम संसद के समक्ष रखे जायेंगे।

जो अनुच्छेद हमारे सामने रखे गये हैं, उनमें एक और बात स्वागत करने के योग्य यह है कि लोक सेवा आयोग के लिये यह आवश्यक है कि अपने कार्य

[पं. हृदयनाथ कुंजरू]

का वार्षिक प्रतिवेदन कार्यपालिका के सामने रखे और कार्यपालिका का ध्यान उन उदाहरणों की ओर आकर्षित करे, जिनमें कार्यपालिका ने उसके परामर्श को नहीं माना है। और इसके आगे यह और कि कार्यपालिका के लिये यह आवश्यक है कि वह लोक सेवा आयोगों को समुचित विधानमण्डलों के समक्ष प्रस्तुत करे। यह बहुत मूल्यवान उपबन्ध है। इसके महत्व की प्रशंसा नहीं की जा सकती है। समय-समय पर हमें ऐसे उदाहरण मिलते हैं, जिनमें हमें यह आभास होता है कि तत्सम्बन्धी सरकार अनियमितता की दोषी है, पर संविधान में ऐसी कोई रीति नहीं दी गई है, जिसके द्वारा हम यह निश्चित रूप में जान सकें कि किन-किन मामलों में अनियमितता हुई है और कहां तक हुई है। इस विषय पर ठीक सूचना प्राप्त करने की सुविधा के अभाव में विधान-मण्डल के सदस्य भरती सम्बन्धी प्रश्न पूछते हैं, जिनसे मन्त्रियों का या लोक सेवा आयोग का बड़ा अहित होता है। अनुच्छेद 288 (क) इस संकट का निवारण करेगा और यदि कार्यपालिका अनुचित रूप से लोक सेवा आयोग के परामर्श का निरादर करेगी, तो जनता के प्रतिनिधियों को कार्यपालिका के कार्य की आलोचना करने और भविष्य में आयोगों के ठीक परामर्श का निरादर करने से रोकने का अवसर मिलेगा।

श्रीमान, जो दृष्टिकोण मैंने सभा के समक्ष रखा है, वह केवल सिद्धान्त वाद पर आश्रित नहीं है। कम से कम एक मामले में तो जो प्रतिरोध इन अनुच्छेदों में रखे गये हैं, वे व्यवहार रूप में आवश्यक समझे गये हैं। कुछ समय पूर्व कलकत्ता की उच्च न्यायालय ने स्थानीय सरकार द्वारा लोक सेवा आयोग से परामर्श किये बिना की गई नियुक्ति की मान्यता पर आपत्ति उठाने वाले आवेदन पत्र पर विचार किया था। उच्च न्यायालय ने यह मत प्रकट किया कि भारत शासन अधिनियम 1935 के अनुच्छेद 266 में इन विषयों के सम्बन्ध में, जिनके लिये लोक सेवा आयोग से परामर्श करना आवश्यक होगा, दिये हुए उपबन्ध परम आदेशात्मक नहीं है, क्योंकि यह नहीं कहा गया है कि उन उपबन्धों की अवज्ञा करने का परिणाम क्या होगा। अतः उनको केवल निदेशात्मक ही माना गया। दूसरे शब्दों में लोक दृष्टिकोण से कार्यपालिका पर डाले गये आभार मूल अधिकार नहीं थे, वरन केवल निदेशात्मक सिद्धान्त थे। यदि भविष्य में ऐसा कोई मामला उठता है, तो सम्बद्ध लोक सेवा आयोग उसे प्रतिवेदन में उल्लिखित कर सकेगी, जिसे संसद के समक्ष रखना पड़ेगा। अतः यह एक युक्तियुक्त निश्चित बात है कि कार्यपालिका को सावधानी से कार्य करना पड़ेगा, न कि वह मनमाने रूप में शक्तियों का प्रयोग करे और इस प्रकार की कार्यवाही करे कि मानों लोक सेवा आयोग हैं ही नहीं।

श्रीमान, एक और उपबन्ध जिसकी ओर मैं सभा का ध्यान आकर्षित करना चाहूंगा, वह है अनुच्छेद 287। पहिले मसौदा जिस रूप में था, उसके अनुसार सामान्यतया संघ अथवा राज्य की सेवाओं के लिये ही आयोगों से परामर्श करना होता था, वरन अब निगमों अथवा विधि द्वारा सृजित संस्थाओं के सम्बन्ध की नियुक्तियां भी आयोग द्वारा की जायेंगी। यह एक और महत्वपूर्ण रक्षाकवच है। यह बिल्कुल असम्भव तो है ही नहीं कि निकट भविष्य में महत्वपूर्ण विषयों के सम्बन्ध के कुछ निगमों का सृजन हो। उनमें अनेक पद होंगे और उनमें से बहुत से पदों के वेतन ऊंचे होंगे। मूल रूप में जिस प्रकार का मसौदा था, उसके अनुसार लोक

सेवा आयोग को इन पदों के लिये भरती करने का अधिकार न था; पर संशोधित मसौदा जो कि हमारे समक्ष रखा गया है, उसके अनुसार यह आवश्यक है कि किसी निगम या विधि द्वारा सृजित संस्थाओं के अधीन पदों के साथ वही व्यवहार किया जायेगा, जो संघ या किसी राज्य के पदों के साथ होता है।

इन सब बातों को एक साथ लेते हुए यह स्पष्ट है कि जो अनुच्छेद हमारे समक्ष रखे गये हैं, वे स्वागत करने के योग्य हैं। यदि लोक सेवा आयोग के ठीक-ठीक सदस्य चुने जाते हैं और वे बिना किसी पक्ष अथवा भय के कार्य करते हैं, तो इसमें कोई सन्देह नहीं कि लोक सेवाओं में भरती केवल दोष रहित ही नहीं होगी वरन् उसके प्रति कोई शंका तक नहीं की जा सकेगी। और यदि किसी प्रकार से आयोग के सदस्य अच्छे नहीं होंगे और या वे अपने कार्य का ठीक निर्वहन न करेंगे, तो इसका कोई इलाज ही नहीं। संविधान न तो सुदक्ष व्यक्तियों को पैदा कर सकता है और न कार्यपालिका को ऐसे पदाधिकारियों का चुनाव करने के लिये बाध्य कर सकता है, जो सावधानी से और बिना किसी पक्षपात के महत्वपूर्ण प्रकार्यों का निर्वहन कर सके।

श्रीमान, जिन अनुच्छेदों पर हम विचार कर रहे हैं, उन पर कुछ आलोचना हुई है। माननीय मित्र डॉ. देशमुख यह अनुभव करते हैं कि ये अनुच्छेद जनसंख्या के समस्त वर्गों के अधिकारों की रक्षा नहीं करते हैं। वे अनुच्छेद 286 के उस उपबन्ध से सन्तुष्ट नहीं हैं, जो लोक सेवा आयोग से परामर्श किये बिना किसी पिछड़े हुए वर्ग के नागरिकों के लिये आरक्षण के सम्बन्ध में है। वे चाहते हैं कि इस सिद्धान्त को और अधिक विस्तृत किया जाये और वह सब वर्गों के लिये लागू हो। वे तो वास्तव में इससे भी आगे बढ़ते हैं और वह चाहते हैं कि लोक सेवा आयोग से परामर्श किये बिना राज्य यह निर्धारण करे कि संघ में अथवा राज्य में विभिन्न वर्गों का प्रतिनिधान लोक सेवाओं में उनकी संख्या के अनुसार होगा। कई वक्ताओं ने इस संशोधन पर इतने पूर्ण रूप से विचार प्रकट किये हैं कि मैं नहीं समझता हूं कि इस पर और अधिक विचार प्रकट करना मेरे लिये आवश्यक है। पर जिन वक्ताओं ने इस संशोधन का विरोध किया है, उनके विरोध में मैं भी अपना स्वर मिलाना चाहूंगा। हम सब इस बात के इच्छुक हैं, कि लोक सेवाओं में इस रीति से भरती की जाये कि समूची जनता को संतोष हो, पर...।

***डॉ. पी.एस. देशमुखः** यही मैं चाहता हूं।

***पं. हृदयनाथ कुंजरूः** यह जानकर मुझे खुशी हुई है कि मेरे मित्र डॉ. देशमुख यही चाहते हैं। पर इस संशोधन का मसौदा इस प्रकार बनाया गया है कि इससे घोर संकट उत्पन्न हो सकता है। मेरा आशय यह है कि यदि इसको क्रियान्वित किया जायेगा, तो लोक हित को बड़ी भारी क्षति होगी। इस बात का उपक्रम किया जा सकता है कि किसी भी सम्प्रदाय के हितों की उपेक्षा न हो; पर कार्यपालिका के लिये यह अपेक्षित करना बहुत ही अवांछनीय होगा कि वह यह निर्धारित करे कि प्रत्येक वर्ग का लोक सेवाओं में प्रतिनिधित्व उनकी संख्या के अनुसार होगा। हम सब जानते हैं कि इस देश में शिक्षा का व्यापक प्रसार नहीं हुआ है। अतः अधिकांश व्यक्ति अशिक्षित हैं। गम्भीरतापूर्वक क्या हम इस वस्तुस्थिति में यह कर सकते हैं कि सब वर्गों को उनकी संख्या के अनुसार प्रतिनिधित्व मिले? यदि

[पं. हृदयनाथ कुंजरू]

विधानमण्डल में प्रतिनिधित्व का प्रश्न होता, तब तो यह तर्क प्रबल होता। पर जहां तक दिन प्रति दिन राज्य की महत्वपूर्ण कार्यवाही के संचालन का सम्बन्ध है, जिसके लिये ज्ञान और निर्णय शक्ति आवश्यक है, वहां हमें योग्यता के आधार पर ही व्यक्तियों को नियुक्त करना चाहिये। केवल इस आधार पर हम नियुक्ति नहीं कर सकते हैं कि उनकी नियुक्ति से किसी वर्ग को संतोष होगा; क्योंकि यदि ऐसा किया जायेगा, तो वे ही वर्ग जो लोक सेवाओं में उचित भाग चाहते हैं, सब से पहले हानि उठायेंगे क्योंकि अधिक उन्नत वर्गों के सदस्यों की अपेक्षा दक्ष शासन और निष्पक्ष पदाधिकारियों से उनको ही अधिक लाभ होगा। अतः डॉ. देशमुख के संशोधन का विरोध करने के लिये मैं विवश हूं। मुझे इस बात में कोई सन्देह नहीं है कि सभा उसे स्वीकार नहीं करेगी।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी** (मद्रासः जनरल): श्रीमान, मैं प्रस्ताव करता हूं कि इस प्रश्न पर अब मत लिया जाये।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि इस प्रश्न पर अब मत लिया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** डॉ. अम्बेडकर।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** अध्यक्ष महोदय, मेरे मित्र श्री अनन्तशयनम् आयंगर और श्री कुंजरू के भाषणों के बाद जो भिन्न-भिन्न प्रश्न उठाये गये हैं, उनके सम्बन्ध में मेरे कहने के लिये बहुत कम रह जाता है। श्री जसपतराय कपूर ने कहा था कि खण्ड (2) अनावश्यक है। मैं उनसे सहमत नहीं हूं, क्योंकि खण्ड (2) उस विषय से सम्बन्ध रखता है, जो मूल अनुच्छेद 284 के विषय से सर्वथा भिन्न है। अतः मैं समझता हूं कि दोनों खण्डों को रखना आवश्यक है।

मुझे जिस बात पर कुछ कहना है, वह अनुसूचित जातियों और पिछड़े हुए वर्गों के बारे में उठाये गये प्रश्नों के सम्बन्ध में है। मैं समझता हूं कि मैं यह कह सकता हूं कि दोनों अनुच्छेद 296 में जिस पर हम बाद में विचार करेंगे और अनुच्छेद 10 में तत्कथित अनुसूचित जातियों, अनुसूचित आदिमजातियों और पिछड़े हुए वर्गों के हितों की रक्षा के लिये पर्याप्त उपबन्ध कर दिये गये हैं। मैं नहीं समझता हूं कि एक ऐसा उपबन्ध बनाकर, जिसके द्वारा राष्ट्रपति के लिये तत्कथित अनुसूचित जाति या अनुसूचित आदिमजाति या पिछड़े हुए वर्गों के सदस्य को नियुक्त करना अनिवार्य हो जाये, किसी प्रयोजन की सिद्धि होगी।

***श्री ए.वी. ठक्कर** (सौराष्ट्र): अन्य पिछड़े हुए वर्ग!

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** लोक सेवा आयोग के सदस्य का प्रकार्य एक सामान्य रूप का है। वह वहां किसी विशिष्ट वर्ग के हितों की रक्षा के लिये नहीं है। उसे किसी ऐसे व्यक्ति की खोज करने में अपना ध्यान लगाना होगा, जो

नियुक्ति के लिये सर्वोत्तम और सर्वश्रेष्ठ व्यक्ति हो। वास्तविक रक्षण, रक्षण की वास्तविक रीति तो वह है जो ग्रहण की जा चुकी है अर्थात् इन वर्गों में से कुछ नियम संख्या लेने का निर्धारण विधान-मण्डल करे। मुझ से यह भी कहा गया है कि पिछड़े हुए वर्ग क्या हैं, इसकी मैं परिभाषा करूं। मैं समझता हूं कि "पिछड़े हुए वर्ग" शब्द, जहां तक इस देश से सम्बन्ध है, बहुत साधारण सा शब्द है। मैं नहीं समझता हूं कि "पिछड़े हुए वर्गों" शब्दों से अधिक साधारण शब्द में प्रयोग कर सकता हूं। प्रान्त में प्रत्येक व्यक्ति यह जानता है कि पिछड़े हुए वर्ग कौन हैं और इस कारण मैं समझता हूं कि यह अच्छा होगा कि जैसा संविधान में किया गया है, इस विषय को आयोग पर छोड़ दिया जाये, जिसकी नियुक्ति की जायेगी और जो समाज की परिस्थितियों का अनुसंधान करेगी और यह निश्चय करेगी कि इस देश में किन वर्गों को पिछड़े हुए वर्गों में रखा जाये।

***श्री ए.वी. ठक्करः** क्या मैं यह पूछ सकता हूं कि क्या इस काम को पूरा करने में कई वर्ष नहीं लगेंगे?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** हां, पर अन्तर्वर्ती काल में किसी प्रान्तीय सरकार के लिये तत्कथित पिछड़े हुए वर्गों के लिये उपबन्ध बनाने में कोई रुकावट नहीं है। अनुच्छेद 10 के आधार पर वे इस कार्य में पूर्णतया स्वतन्त्र है। इस कारण मेरा निवेदन यह है कि ऐसी कोई आशंका नहीं है कि पिछड़े हुए वर्गों या अनुसूचित जातियों के हितों की सेवाओं में भरती करने के विषय में उपेक्षा की जायेगी। जैसा कि मेरे मित्र पण्डित कुंजरू ने कहा था, जो अनुच्छेद मैंने सभा में प्रस्तुत किये हैं वे वास्तव में उन अनुच्छेदों से बहुत अच्छे हैं, जो संविधान के मसौदे में पहले थे। यदि मैं स्वयं अपने लिये कुछ कह सकता हूं, तो यह कहूंगा कि हमने कनाडा की विधि तथा आस्ट्रेलिया की विधि के उपबन्धों का बहुत अध्ययन किया और मैं यह कहूंगा कि हम एक ऐसा बीच का मार्ग खोज निकालने में सफल हुए हैं, जिसे स्वीकार करने में मैं आशा करता हूं कि सभा को कोई कठिनाई नहीं होगी।

***अध्यक्षः** अब मैं इन सब संशोधनों पर मत लूंगा। श्री जसपतराय कपूर द्वारा पेश किया गया अनुच्छेद 286 पर पहला संशोधन संख्या 13 है। प्रश्न यह है:

> "कि उपरोक्त संशोधन संख्या 12 में प्रस्थापित अनुच्छेद 286 के खण्ड (2) को अपमार्जित किया जाये और अनुवर्ती खण्डों को तदनुसार फिर से क्रमांकित किया जाये।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

> "कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (पंचम सप्ताह) के संशोधन 12 में प्रस्थापित अनुच्छेद 286 के खण्ड (3) के परन्तुक को अपमार्जित किया जाये।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (पंचम सप्ताह) के संशोधन 12 में प्रस्थापित अनुच्छेद 286 के खण्ड (3) के स्थान में निम्न खण्ड रखा जाये।"

'(3) The Union Public Service Commission as respects the All India Services and also as respects other services and posts in connection with the affairs of the Union, and the State Public Service Commission as respects the State services also as respects other services and posts in connection with the affairs of the State, shall be responsible for all appointments, carrying a maximum of Rs. 250/- (Two hundred and fifty rupees)'."

[अखिल भारतीय सेवाओं तथा संघ के विषयों से सम्बन्धित अन्य सेवाओं और पदों के सम्बन्ध में संघ लोक सेवा आयोग और राज्य सेवाओं तथा राज्य के विषयों से सम्बन्धित अन्य सेवाओं और पदों के सम्बन्ध में राज्य लोक सेवा आयोग उन सब नियुक्तियों के प्रति उत्तरदायी होगा, जिनका अधिकतम वेतन 250 रुपये (ढाई सौ रुपये) होगा।]

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***डॉ. पी.एस. देशमुख:** अपने पेश किये गये संशोधन संख्या 82 को वापस करने की मैं अनुमति मांगता हूं।

सभा की अनुमति से संशोधन वापस किया गया।

***अध्यक्ष:** श्री नज़ीरुद्दीन अहमद द्वारा पेश किया गया अगला संशोधन संख्या 84 है।

प्रश्न यह है:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (पंचम सप्ताह) के संशोधन 12 में प्रस्थापित अनुच्छेद 286 के खण्ड (3) के परन्तुक के पश्चात् यह नया परन्तुक जोड़ दिया जाये:

'Provided further that the Public Service Commission of the Union shall always be consulted where the service carries a maximum pay of Rs. 500/- per month and the State Public Service Commission shall always be consulted where the service carries a maximum pay of Rs. 250/-'."

[पर यह और भी कि संघ लोक सेवा आयोग से सदैव परामर्श किया जायेगा, यदि किसी सेवा के लिये अधिकतम वेतन 500 रुपये है और राज्य के लोक

सेवा आयोग से सदैव परामर्श किया जायेगा, यदि किसी सेवा के लिये अधिकतम वेतन 250 रुपये है।]

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (पंचम सप्ताह) के संशोधन 12 में प्रस्थापित अनुच्छेद 286 के खण्ड (4) को अपमार्जित किया जाये।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***डॉ. पी.एस. देशमुख:** अपने पेश किये गये संशोधन संख्या 86 को वापस लेने की मैं अनुमति मांगता हूं।

सभा की अनुमति से संशोधन वापस किया गया।

***अध्यक्ष:** इसके बाद संशोधन संख्या 87। प्रश्न यह है:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (पंचम सप्ताह) के संशोधन 12 में प्रस्थापित अनुच्छेद 286 के खण्ड (4) को पश्चात् निम्न व्याख्या स्पष्ट की जाये:

Explanation—Backward class of citizens would mean and include class or classes of citizens backward economically and educationally."

व्याख्या—पिछड़े वर्ग के नागरिकों का आर्थिक तथा शैक्षिक रूप में पिछड़े हुऐ वर्ग या वर्गों से अभिप्रेत होगा और ऐसे ही वर्ग उसके अन्तर्गत आयेंगे।

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***डॉ. पी.एस. देशमुख:** अपने संशोधन संख्या 88 को वापस लेने की मैं अनुमति मांगता हूं।

सभा की अनुमति से संशोधन वापस किया गया।

***अध्यक्ष:** श्री आर.के. सिधवा का संशोधन संख्या 89। प्रश्न यह है:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (पंचम सप्ताह) के संशोधन संख्या 12 में प्रस्थापित अनुच्छेद 286 के अन्त में यह नया खण्ड जोड़ दिया जाये:

'(6) The Commission shall submit to the legislature every year a report setting out all cases, the Government's reasons in each case, and the Commission's views thereon where there is difference of opinion'."

[अध्यक्ष]

[(6) आयोग प्रति वर्ष विधान-मण्डल को एक प्रतिवेदन भेजेगा, जिसमें वे सब मामले, जिन पर मतभेद है, उन मामलों पर सरकार के कारण होंगे और उन पर आयोग के विचार होंगे।]

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (पंचम सप्ताह) के संशोधन संख्या 12 में प्रस्थापित अनुच्छेद 286 के खण्ड (3) के स्थान में यह खण्ड रखा जाये:

'(3) The Union Public Service Commission with regard to All India Services and also in regard to other services and posts in connection with the affairs of the Union, and the State Public Service Commission in regard to the State Services and also in regard to the services and posts in connection with affairs of the State shall be consulted in respect of all appointments, transfers and disciplinary matters relating to these Services'."

[अखिल भारतीय सेवाओं तथा संघ के विषयों से सम्बन्धित अन्य सेवाओं और पदों के सम्बन्ध में संघ लोक सेवा आयोग और राज्य सेवाओं तथा राज्य के विषयों से सम्बन्धित अन्य सेवाओं और पदों के सम्बन्ध में राज्य लोक सेवा आयोग से इन सेवाओं से सम्बन्धित समस्त नियुक्तियों, बदली और अनुशासनीय विषयों में परामर्श होगा।]

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्थापित अनुच्छेद 286 पर मत लूंगा।

प्रश्न यह है:

"कि प्रस्थापित अनुच्छेद 286 संविधान का अंग बने।"

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

अनुच्छेद 286 संविधान में प्रविष्ट किया गया।

***अध्यक्ष:** डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्थापित रूप में मैं अब अनुच्छेद 287 को लूंगा। उस पर श्री नज़ीरुद्दीन अहमद का एक संशोधन है। प्रश्न यह है:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (पंचम सप्ताह) के संशोधन संख्या 16 में प्रस्थापित अनुच्छेद 287 में 'or other body corporate शब्दों के स्थान

में 'or other body corporate not being a company within the meaning of the Indian Companies Act 1913 or Banking Companies within the meaning of the Banking Companies Act 1949' शब्द प्रविष्ट किये जायें।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि प्रस्तावित अनुच्छेद 287 संविधान का अंग बने।"

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

अनुच्छेद 287 संविधान में प्रविष्ट किया गया।

***अध्यक्ष:** अनुच्छेद 288 पर कोई संशोधन नहीं है, अत: मैं उस पर मत लूंगा। प्रश्न यह है:

"कि प्रस्तावित अनुच्छेद 288 संविधान का अंग बने।"

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

अनुच्छेद 288 संविधान में प्रविष्ट किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि नया अनुच्छेद 288-क संविधान का अंग बने।"

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

अनुच्छेद 288-क संविधान में प्रविष्ट किया गया।

अनुच्छेद 292

***अध्यक्ष:** अब हम अनुच्छेद 292 को लेंगे।

***पं. ठाकुरदास भार्गव:** (पूर्वी पंजाब: जनरल): पर मैंने एक नये अनुच्छेद 291 की स्थापना की है और उस अनुच्छेद को अब ले लिया जाये।

***अध्यक्ष:** मैं समझता हूं कि वह एक दूसरे अनुच्छेद के अन्तर्गत आ जाता है।

***पं. ठाकुरदास भार्गव:** पर मेरा अनुच्छेद उससे अधिक व्यापक है।

***अध्यक्ष:** आप उसे अनुच्छेद 294-क पर संशोधन के रूप में पेश कर सकते हैं। क्या वह अनुच्छेद 295-क के अन्तर्गत नहीं आता है?

***पं. ठाकुरदास भार्गव:** आता तो है, पर अनुच्छेद 295-क, अनुच्छेद 293 और 295 से कोई सम्बन्ध नहीं रखता है और मेरे संशोधन के अन्तर्गत ये दोनों संशोधन आ जाते हैं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** माननीय सदस्य का संशोधन प्रस्थापित अनुच्छेद 295-क से निकट सम्बन्ध रखता है। अनुच्छेद 295-क का क्षेत्र संकुचित है। अनुच्छेद 291-क पर माननीय सदस्य का संशोधन इन अनुच्छेदों के क्षेत्र को विस्तृत करता है। अत: माननीय सदस्य के लिये यह उचित होगा कि वह अपने संशोधन को अनुच्छेद 295-क पर अनुच्छेद के रूप में पेश करें। मैं समझता हूं कि अध्यक्ष द्वारा दिया गया सुझाव ठीक है। माननीय सदस्य उसे अनुच्देद 295-क पर संशोधन के रूप में पेश करें।

***अध्यक्ष:** यही सुझाव मैं दे रहा था।

***पं. ठाकुरदास भार्गव:** जैसी आपकी इच्छा है, वही ठीक है, श्रीमान।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मैं यह प्रस्ताव करता हूं कि अनुच्छेद 292 के स्थान में यह अनुच्छेद रखा जाये:

"292 (1) Seats shall be reserved in the House of the people for—

Reservation of seats for Scheduled Castes and Scheduled Tribes in the House of the people.

(a) the Scheduled Castes;

(b) the Scheduled Tribes except the scheduled tribes in the tribal areas of Assam;

(c) the scheduled tribes in the autonomous districts of Assam.

[292 (1) लोक सभा में–

अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिमजातियों के लिये लोक सभा में स्थानों का रक्षण।

(क) अनुसूचित जातियों के लिये,

(ख) आसाम के आदिम क्षेत्रों में की अनुसूचित आदिमजातियों को छोड़ कर आदिमजातियों के लिये,

(ग) आसाम के स्वायतशासी जिलों में की अनुसूचित आदिमजातियों के लिये स्थान रक्षित रहेंगे।

(2) खण्ड (1) के अधीन अनुसूचित जातियों या अनुसूचित आदिमजातियों के लिये किसी राज्य में रक्षित रखे गये स्थानों की संख्या का अनुपात लोक सभा में उस राज्य को बांट में दिये गये स्थानों की समस्त संख्या से यथाशक्य वही होगा, जो यथास्थिति उस राज्य में अनुसूचित जातियों की, अथवा उस राज्य में की या उस राज्य के भाग में भी अनुसूचित आदिमजातियों की, जिनके सम्बन्ध में स्थान पर इस प्रकार रक्षित है, जनसंख्या का अनुपात उस राज्य की समस्त जनसंख्या से है।

यह अनुच्छेद 292 इस विषय पर परामर्शदात्री समिति के विनिश्चयों की ज्यों की त्यों प्रतिलिपि है और मैं नहीं समझता हूं कि इस सम्बन्ध में किसी व्याख्या की आवश्यकता है।

***अध्यक्ष:** यह उस विनिश्चय का रूप है, जिसको इस सभा के एक और सत्र में किया गया था जब कि परामर्शदात्री समिति के प्रतिवेदन पर विचार कर रहे थे। उस समय किये गये विनिश्चय को इस रूप में रखा गया है। इस पर कई संशोधन हैं। मैं अब उनको लूंगा।

***प्रो. निवारन चन्द्र लस्कर** (आसाम: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं संशोधन संख्या 24 पेश करूंगा। संशोधन संख्या 23 मैं पेश नहीं करूंगा। मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

> "कि उपरोक्त संशोधन संख्या 22 में प्रस्थापित अनुच्छेद 292 के खण्ड (2) में 'under clause (1) of this article shall' शब्द, कोष्ठक और अंक के पश्चात् 'save in the case of the Scheduled Castes in Assam' शब्द प्रविष्ट किये जायें।"

यदि मेरा संशोधन स्वीकार कर लिया जाता है, तो अनुच्छेद 292 का खण्ड (2) इस प्रकार पढ़ा जायेगा:

> "आसाम में की अनुसूचित जातियों को छोड़कर खण्ड (1) के अधीन अनुसूचित जातियों या अनुसूचित आदिमजातियों के लिये किसी राज्य में रक्षित रखे गये स्थानों की संख्या का अनुपात लोक सभा में उस राज्य को बांट में दिये गये स्थानों की समस्त संख्या से यथाशक्य वही होगा, जो यथास्थिति उस राज्य में की अनुसूचित जातियों की, अथवा उस राज्य में की या उस राज्य के भाग में की अनुसूचित आदिमजातियों की, जिनके सम्बन्ध में स्थान इस प्रकार रक्षित हैं, जनसंख्या का अनुपात उस राज्य की समस्त जनसंख्या से है।"

मेरे संशोधन में दिये हुए एक बहुत ही छोटे से रूपभेद के साथ डॉ. अम्बेडकर के इस प्रस्थापित संशोधन का मैं सम्पूर्ण हृदय से समर्थन करता हूं। संविधान सभा के गत अधिवेशन में सिवाय अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिमजातियों के अन्य सब अल्पसंख्यक वर्गों के लिये स्थान रक्षण मिटाने का ऐतिहासिक विनिश्चय किया गया था। मैं संविधान सभा के उन सदस्यों को अपना हार्दिक धन्यवाद देता हूं, जिन्होंने अल्पसंख्यक वर्गों के लिये बनाई गई उपसमिति के प्रतिवेदन का समर्थन किया और अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिमजातियों को ये विशेषाधिकार दिये। मैं अपने कर्तव्य का पालन नहीं करूंगा यदि मैं यह न कहूं कि देश में की अनुसूचित जातियां और आदिमजातियां माननीय प्रधानमंत्री, माननीय उप प्रधान मंत्री और अल्पसंख्यक वर्गों के लिए बनाई गई उपसमिति के सभापति के प्रति चिर कृतज्ञ रहेंगी, जिनको उनके लिये एक भारी विरोध का सामना करना पड़ा। उनकी कृपा से ही अनुसूचित जातियों और आदिमजातियों को ये राजनैतिक अधिकार मिल रहे हैं।

[प्रो. निवारन चन्द्र लस्कर]

मेरा मत है कि किसी प्रकार का भी रक्षण लोकतन्त्र के सिद्धान्तों के विरुद्ध होगा, पर ये परिस्थितियां जैसे कि अनुसूचित जातियों में राजनीतिक जागृति का अभाव, उनका शिक्षा में पिछड़े हुए रहना और उनकी बड़ी शोचनीय आर्थिक स्थिति उनको विवश करती है कि वे इन विशेषाधिकारों की मांग करें। यदि डॉ. अम्बेडकर का संशोधन स्वीकार कर लिया जायेगा, तो अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिमजातियों को स्थान रक्षण मिल जायेगा। परन्तु संविधान के मूल विचार के रूप में यह कहा गया है कि लोक सभा में 5 लाख जनसंख्या पर एक स्थान के आधार पर प्रतिनिधित्व होगा और निर्वाचन से सद्यपूर्ण की गई जनगणना के अनुसार यह कार्य होगा। इस कारण मेरे मन में इस बात के प्रति बड़ी-बड़ी आशंकायें हैं कि क्या आसाम में की अनुसूचित जातियों को इस विशेषाधिकार से लाभ होगा। दुर्भाग्यवश सिलहट का जिला, जो आसाम का भाग था, लोकमत के आधार पर पाकिस्तान में मिला दिया गया है और इसके कारण अनुसूचित जातियों के लगभग तीन लाख व्यक्ति पाकिस्तान को चले गये और अनुसूचित जातियों की जनसंख्या जो विभाजन के पूर्व 6,76,566 थी, 1941 की जनसंख्या के अनुसार वह विभाजन के पश्चात् 3,77,025 रह गई, यद्यपि 1941 की जनसंख्या के आंकड़ों की प्रामाणिकता में मैं सन्देह करता हूं। मैं उसको सिद्ध करने का प्रयत्न करूंगा। 1941 की जनगणना में दिये हुए आंकड़ों के अनुसार अनुसूचित जातियां लोक सभा में एक भी स्थान के अधिकार की मांग नहीं कर सकती है। अतः अपने संशोधन के द्वारा मैं इन अनुसूचित जातियों के लिये निर्वाचन आयोग अथवा किसी भी अन्य प्राधिकारी के समक्ष अपनी उचित मांगों के रखने के लिये एक अपवाद रखना चाहता हूं। सर्वप्रथम, मैं सभा को यह बताऊंगा कि 1941 की जनगणना के आंकड़े असत्य, मिथ्या तथा भ्रमात्मक हैं। समस्त आसाम की कुल जनसंख्या केवल एक करोड़ है। मैं केवल बड़े-बड़े सम्प्रदायों को ही लूंगा। 1941 की जनगणना के प्रतिवेदन के अंक 9 में 1931 से 41 तक सम्प्रदायों की जनसंख्या के अन्तर के बारे में ये आंकड़े दिये हुए हैं: हिन्दुओं में 12 प्रतिशत की कमी है और मुसलमानों में 24 प्रतिशत की वृद्धि। आदिमजातियों में 184 प्रतिशत वृद्धि हुई है। ब्रह्मपुत्रा की घाटी में आदिमजातियों की 477 प्रतिशत वृद्धि हुई है और सूरमा की घाटी में 2266 प्रतिशत की वृद्धि। इन आंकड़ों से सभा 1941 की जनसंख्या के आंकड़ों की असत्यता जान सकती है। जबकि आसाम प्रान्त में सामान्य वृद्धि 18 प्रतिशत है, तो आदिमजातियों में 184 प्रतिशत की वृद्धि है और हिन्दुओं में 12 प्रतिशत की कमी है।

अल्पसंख्यक वर्ग सम्बन्धी उपसमिति के प्रतिवेदन में बागों में काम करने वाले लगभग 9 लाख मजदूरों को, जिनको सन् 1931 की जनगणना में आदिम जातियों में रखा गया था, साधारण जनगणना में रख दिया गया है। यदि जनगणना के आंकड़े सही हैं, तो बागों के 9 लाख मजदूरों को आदिमजातियों में से निकाल कर सामान्य कोटि में रखना किसी प्रकार से भी न्यायपूर्ण नहीं है। ऐसा करने से अनुसूचित जातियों की संख्या कम हो गई। 1911 से 1931 तक शनैः शनैः अनुसूचित जातियों की संख्या में जो कमी हुई है, उसे अलग रखते हुए यदि हम बागों के 9 लाख मजदूरों को, जिनको कि सामान्य जनगणना में रख दिया गया है, शामिल कर लें तो हम अनुसूचित जातियों की संख्या सरलता से प्राप्त कर सकते हैं। अब प्रश्न

यह है कि बागों के मजदूर किस सम्प्रदाय के हैं? अभिलेखों से मैं यह सिद्ध कर सकता हूं कि उनमें से 80 प्रतिशत हिन्दू हैं और इन हिन्दुओं में 80 प्रतिशत अनुसूचित जातियों के हैं।

***श्री ए.बी. ठक्करः** वक्ता की बातें हमारी समझ में नहीं आती हैं।

***प्रो. निवारन चन्द्र लस्करः** 1911 के बाद से अनुसूचित जातियों में अपने सम्प्रदायों के बदलने की प्रवृत्ति रही है, क्योंकि उनको यह बड़ा भारी भय रहता था कि उनकी जाति के नाम से उनको सरकारी नौकरियां नहीं मिलेंगी। इस कारण धीरे-धीरे ये सम्प्रदाय कम होते गये। 1911 में अनुसूचित जातियों की संख्या 13 लाख थी, 1921 में 14 लाख थी और 1931 में वह 6 लाख रह गई और 1941 में 4 लाख। उदाहरणार्थ पाटनी नामक अनुसूचित जाति की संख्या 1911 में 1,11,000 थी, परन्तु 1921 में वह 45,000 रह गई। इस जाति के सम्बन्ध में जनगणना के अधीक्षक ने अपनी 1921 के प्रतिवेदन के अंक 3 के पृष्ठ 154 में यह कहा है "स्वयं एक नेता ने जो कि ब्राह्मण था, यह सुझाव दिया था कि कोई जाति, जिसका निरादर किया जाता है, वह बिना किसी अच्छे नाम के अपनी स्थिति में सुधार करने की आशा नहीं कर सकती है। इससे यह सिद्ध होता है कि अनुसूचित जातियों की संख्या उन लोगों ने कम कराई, जो अनुसूचित जातियों के नहीं थे।

***अध्यक्षः** क्या आप अधिक समय लेंगे?

***प्रो. निवारन चन्द्र लस्करः** मुझे कुछ अधिक समय लगेगा।

***अध्यक्षः** तो फिर इस विषय को हम कल लेंगे। सभा बुधवार के नौ बजे तक के लिये स्थगित की जाती है।

इसके पश्चात् सभा बुधवार ता. 24 अगस्त, 1949 के नौ बजे तक स्थगित हुई।